चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र

Chandamama, October '49 Photo by K. Mutharamalingam

दो भाई

चार भाषाओं में चन्दामामा

माँ-बच्चों के लिए एक सचित्र मासिक पत्र

मीठी कहानियाँ, मनोरंजक व्यंग्य-चित्र, सुन्दर
कविताएँ, पहेलियाँ और तरह तरह के लेख ।

हिन्दी

तेलुगू

तमिल

कन्नड

भाषाओं में प्रकाशित होता है ।

एक प्रति का दाम ।=)

एक साल का चन्दा ४॥)

दो साल का चन्दा ८)

अगर आप चाहते हैं कि चन्दामामा आप को हर महीने
नियम से मिलता रहे तो चन्दामामा के ग्राहक बन जाइए ।

चन्दामामा पब्लिकेषन्स

पो. बा. १६८६ :: मद्रास-१.

इनके अलावा, मन बहलाने वाली पहेलियाँ, सुन्दर रँगीले चित्र, और भी अनेक प्रकार की विशेषताएँ हैं।

चन्दामामा कार्यालय

पोस्ट बाक्स नं० १६८६

मद्रास-१

ग्राहकों और एजेंटों को

एक सूचना

चन्दामामा का पहला अङ्क १५ अगस्त को निकला था। लेकिन वह सितम्बर का अङ्क ही था। हमारी सभी पत्रिकाएँ हर महीने की पहली तारीख को ही निकल जाती हैं। इसलिए हम चाहते हैं कि हिन्दी चन्दामामा भी पहली को ही निकले। आगे से ऐसा ही होगा। हम ग्राहकों और एजण्टों से प्रार्थना करते हैं कि वे चन्दामामा के अगस्त १५ वीं के अङ्क को ही सितम्बर का अङ्क मान लें। इस तरह सभी ग्राहकों के चन्दे सितम्बर से शुरू होंगे। इससे ग्राहकों और एजण्टों को जो कुछ असुविधा हुई हो उसके लिए हम क्षमा-प्रार्थी हैं।

वर्ष १ | संचालक: चक्रपाणी | १ अक्तूबर
अङ्क २ | | १९४९

हिन्दी संसार में 'चन्दामामा' का जो स्वागत हुआ उस के लिए हम अपने नन्हें पाठकों को धन्यवाद देते हैं। साहित्यिकों तथा पत्र-पत्रिकाओं से हमें जो प्रोत्साहन मिला है उसके लिए हम कृतज्ञ हैं।

'चन्दामामा' को देख कर संतोष प्रगट करते हुए बच्चों के बहुत से पत्र हमारे पास आए। पड कर हमें बहुत खुशी हुई। वे हमारे श्रम की सफलता सूचित करते हैं। इससे अधिक हमें और क्या चाहिए?

हम 'चन्दामामा' को आगे-आगे और भी सुन्दर, रोचक और मन-मोहक बनाने का प्रयत्न करेंगे। पाठकों और हितैषियों के मन में हमने जो आशा जगाई है उसे भरसक पूरी करेंगे। अगर हमारे पाठक और शुभाकांक्षी योग्य सूचनाएँ देकर इस काम में हमारी सहायता करेंगे तो हम उनके बडे आभारी रहेंगे।

कछुआ और लोमड़ी

किसी ताल की गहराई में
कछुआ एक रहा करता;
बैठे-बैठे ऊब गया मन
जब उस बेचारे का इक दिन,
ताल किनारे सूखी धरती
पर पहुँचा चलता फिरता।

भूली भटकी एक लोमड़ी
वहाँ कहीं से आ निकली,
उस कछुए को देख झपट कर
वह दबोच बैठी, खप्पर पर
खट खट दाँत लड़ाए नाहक,
उस की आशा नहीं फली।

हार मान कर उसने पूछा—
'क्यों जी, ऐ कछुए महराज!
मुश्किल है तुमको खा जाना
ज्यों लोहे के चने चबाना!'
कछुआ बोला—'घूम धूप में
थोड़ा सूख गया हूँ आज!

तनिक भिंगो दो तो पानी में
मालपुए सा बन जाऊं।'
कहा लोमड़ी ने—'अच्छा जी!
रहने दो अपनी चालाकी,
इतनी बुद्धू मैं नहीं कि जो
तेरे चकमे में आऊँ!'

'बैरागी'

कछुआ बोला—' अपने पंजे
मुझ पर धर दाबे रहना !
फिर मैं किधर खिसक पाऊँगा ?
कैसे तुम को धोखा दूँगा ?'
कहा लोमड़ी ने अपने मन
में—'सच है इस का कहना !'
उस ने त्यों ही किया और फिर
थोड़ी देर बाद पूछा—
'क्यों जी ? बोलो तो, अब तक तुम
क्या हो पाए नहीं मुलायम ?'
'थोडी कसर रह गई है जी !'
धीरे से बोला कछुआ ।
'अपना पंजा जरा हटा लो
तो वह हो जाए पूरी !'
कहा लोमड़ी ने मन में हँस—
'कछुए का कहना सच है !' बस,
पंजा हटा लिया, कछुए की
दूर हुई सब मजबूरी ।
खिसक गया गहरे पानी में,
रही लोमड़ी पछताती—
बोलो तो, प्यारे बच्चो सच !
क्या सीखा इससे तुमने अब ?
सुन लो, सदा बेवकूफों के
सिर पर ही विपदा आती !

बच्चो !

ऊपर देखो ! ६ नावें हैं। सभी देखने में एक सी लगती हैं, लेकिन वास्तव में नहीं हैं। दो नावों में थोडा फ़र्क है। बाकी चारों एक सी हैं। जरा बताओ तो देखें कि फ़र्क वाली नावें कौन सी हैं ? अगर न बता सको तो ५६-वाँ पृष्ठ देखो।

कहते हैं कि किसी जमाने में एक बडी ही सुन्दर लड़की थी। वह सूत निकालना और बुनना बहुत अच्छी तरह जानती थी। उस का निकाला हुआ सूत बहुत महीन होता था। सबेरे की हल्की धूप में जो सतरंगी किरणें छिपी रहती हैं उन से भी महीन था वह सूत; और कोमल इतना था कि शिरिस फूल भी उस की बराबरी न कर सकता था।

और वह बुनती कितना सुन्दर थी! उसका निकाला हुआ सूत दुनिया भर में मशहूर था। सच पूछा जाय तो उस जमाने में कोई भी उस की तरह न सूत निकाल सकता और न बुन सकता था।

जब वह करघे पर बुनने बैठती तो उस की शोभा का क्या कहना! दूर-दूर के देशों से लोग उस का बुनना देखने आते थे। उस के बुने हुए कपडों पर ऐसे सुंदर बेल-बूटे कढ़े रहते कि देखने-वाले दंग रह जाते। जब वह कपडों पर बेल-बूटे और फल-फूल कढ़ती तो तितलियाँ उनको देख भ्रम में पड़ जातीं और उन कपड़ों पर आकर बैठ जातीं। लोग खडे-खडे देखते और कहते–'वाह! भई! वाह! क्या अच्छा बुनती है! यह जरूर कोई देवी है जिसने किसी शाप के कारण धरती पर जन्म लिया है।'

उस के बुने हुए कपड़ों की ऐसी धूम थी कि महारानियाँ भी उस के घर आतीं और कपड़ा करघे पर से उतारने के पहले ही खरीद ले जातीं। उस के दरवाजे पर हमेशा गाहकों की भीड़ लगी रहती थी।

इस तरह उस लड़की को बहुत धन मिलने लगा। कुछ ही दिनों में वह बड़ी अमीर बन गई। लेकिन ज्यों-ज्यों धन बढ़ता गया त्यों-त्यों उसका घमंड भी।

एक दिन एक पड़ोसिन उस का कपड़ा बुनना देखने आई और उस की चतुरता देख

वह चकित होकर बोली—"बिटिया! तुम्हारा बुना हुआ यह कपड़ा साँप की केंचुली से भी महीन है। यह कपड़ा देखने से तो ऐसा मालूम होता है मानो देवी सरस्वती ने खुद तुम्हें बुनना सिखा दिया है। नहीं तो क्या कोई ऐसा कपड़ा बुन सकता है!"

और कोई होती तो यह तारीफ़ सुन फूली न समाती। लेकिन ये बातें उस घमंडिन को क्यों सुहातीं! उस ने मुँह बना कर कहा—"देवी सरस्वती क्या सिखाएगी मुझे! सिखाने के लिए पहले उसे कुछ आता भी है! मुझे कोई क्या सिखाएगा! मैं ही सभी को सिखा सकती हूँ!"

उस लड़की के पिता ने, जो वहीं बैठे हुए थे, समझा कर कहा—"बेटी! ऐसी बातें नहीं करनी चाहिएँ। कहीं देवी को क्रोध आ गया तो फिर तुझ से क्या करते बनेगा?"

लेकिन उस घमंडिन ने और भी अकड़ कर कहा—"पिताजी! आप भी ऐसा क्यों कहते हैं! अगर सरस्वती यहाँ होती और मुझ से बुनने में होड लगाती तो फिर पता चल जाता कि कौन किससे बढ़कर है!"

इतने में एक बुढ़िया वहाँ आई और बोली—"रानी बिटिया! हो सकता है कि तुम बुनने में सबसे बढ़ गई हो। लेकिन सारे संसार को ज्ञान देने वाली सरस्वती से होड करना उचित नहीं है। विद्या के साथ-साथ विनम्रता भी सीखनी चाहिए। घमंड से ही मनुष्य का पतन होता है। इसलिए अच्छा हो, अब भी तुम अपनी गलती समझ कर उनसे क्षमा माँग लो।"

बुढ़िया की ये बातें सुनते ही मानों उस लड़की के क्रोध की आग में घी पड गया और उस ने तमक कर कहा—"जा! जा! बड़ा उपदेश देने आई है! तुम क्या जानती हो कि मैं कैसा बुनती हूँ! अगर वह सरस्वती

वहा होती तो फिर मैं दिखा देती कि बुनना किसे कहते हैं।"

इतना सुनते ही बुढ़िया लोप हो गई और सरस्वती देवी खुद वहाँ आ खड़ी हुईं! वहाँ जितने लोग थे सब डर के मारे थरथराने लगे कि अब क्या होने वाला है! वे लोग जानते थे कि सचमुच वह लड़की बहुत अच्छा बुनती है। संसार में कोई उस की तरह नहीं बुन सकता। पर उन्हें यह भी मालूम था कि वह बड़ी घमंडिन है। वे बड़े दुखी थे कि यह लड़की देवी से दुश्मनी करके अपने पैरों पर आप ही कुल्हाडी चला रही है। देवी को देख कर भी वह लड़की बिलकुल नहीं घबराई।

वह बड़ी ऐंठ के साथ बोली—"तो आप ही हैं सरस्वती देवी! आइए तो, जरा देखा जाए कि हम दोनों में कौन अच्छा बुनती है!"

वहीं दो करघे पड़े थे। दोनों ने अपना अपना करघा चुन लिया और बुनने लगीं। सब लोग मिट्टी की मूरतों की तरह उन का बुनना देखते रहे। वे देखना चाहते थे कि

इस होड का क्या नतीजा निकलता है। थोडी ही देर में दोनों ने दो थान बुन लिए।

देवी ने जो कपडा बुना उस पर सुंदर, दिव्य, रंग-बिरंगे चित्र थे। उन चित्रों में सब के मुँहों पर हँसी खेल रही थी। उन चित्रों को देखते ही मन प्रसन्न हो जाता था।

उस लड़की ने जो कपडा बुना था उस पर भी चित्र थे। वे रंग-बिरंगे तो थे लेकिन उनमें सब के मुँह पिचके हुए थे। उन पर क्रोध और द्वेष की रेखा पड़ी हुई थी। उस लड़की का क्रोध और द्वेष उन चित्रों में भी उतर आया था। उन चित्रों को देखते ही सबने मुँह फेर लिया और उस लड़की को लाचार होकर हार माननी पड़ी।

देवी ने कहा—"लड़की! तुम बुनती बहुत अच्छा हो, इसमें कोई शक नहीं। लेकिन तुम देवताओं से होड नहीं कर सकती। अगर तुम विद्या के साथ-साथ विनम्रता भी सीख लेती तो आज यह नौबत न आती। लेकिन तुम्हारे घमंड का कोई ठिकाना न रहा। अब तुम्हें इसका फल भुगतना होगा। मैं तुम्हें ऐसा शाप देती हूँ जिस से तुम्हें जीवन भर बुनने के सिवा और कोई काम न रहे और लोग तुम्हारा बुनना देख कर अचरज करें। जाओ, यही तुम्हारी सजा होगी।" यह शाप दे कर देवी ओझल हो गई।

देवी का शाप लगते ही उस लड़की की काया पलट गई। वह एक सुन्दर लड़की का रूप छोड़कर एक नन्हा-सा कीडा बन गई। उस दिन से लोग उसे 'मकडी' कह कर पुकारने लगे।

अब वह और क्या कर सकती थी! लजा कर एक अँधेरे कोने में जा छिपी और वहीं झीने नाज़ुक तारों से सुन्दर जाला बुनने लगी।

उन दोनों को वर्धमान एक पहाड़ सा दीख पड़ता था। इसलिए उन्होंने उस का नाम 'मानवी-पर्वत' रखा। उसे देखने को बहुत से लोग उस मंदिर के सामने की सड़कों पर क़तारें बाँध कर खड़े हो गए। उस मंदिर के सामने ही क़िले की एक बड़ी ऊँची मीनार थी। उस देश के राजा, रानी और कुछ चुने हुए दरबारी उस मीनार पर चढ़कर तमाशा देख रहे थे।

वर्धमान रेंगता हुआ उस मंदिर के अंदर चला गया। उसने चारों ओर नजर दौड़ा कर देख लिया कि उसके रहने की जगह कैसी है! फिर वह बाहर आया और सीधा तन कर खड़ा हो गया। खड़े होने पर वह देश उसे खिलौनों-सा दीख पड़ा। दूर पर जङ्गल नजर आते थे जिन में ऊँचे-से-ऊँचे पेड़ भी सात फुट से ज्यादा न थे। दूसरी ओर शहर बसा हुआ था जो घरौंदों-सा मालूम होता था।

राजा वर्धमान से बातें करने के लिए मीनार से उतरा और घोड़े पर सवार हो कर उसके नजदीक आया। वर्धमान की लंबाई-चौड़ाई देखकर राजा-साहब का घोड़ा भड़क गया। लेकिन राजा अच्छा घुड़सवार था, इसलिए गिरते गिरते सँभल गया। सिपाहियों की मदद से वह नीचे उतरा और पैदल ही वर्धमान के सामने आकर खड़ा हो गया। राजा की सुविधा के लिए वर्धमान ज़मीन पर लेट गया। राजा के हाथ में एक नन्ही सी तलवार थी। राजा के सिर पर जो मुकुट था वह वर्धमान की अँगूठी के बराबर था। उस मुकुट के हीरे-जवाहरात जगमगा रहे थे।

राजा गला फाड़ फाड़ कर वर्धमान से कुछ कहने लगा जो वर्धमान की समझ में

'गलिवर्स ट्रावेल्स' का स्वेच्छानुवाद

न आया। वर्धमान बहुत सी भाषाएँ जानता था। उसने राजा से संस्कृत, प्राकृत, पाली और पैशाची वगैरह में प्रश्न किए। लेकिन न राजा इनमें से कोई भाषा जानता था और न उसके दरबारी पंडित ही।

"यह हमारी बोली नहीं समझ सकता, लेकिन आदमी तो भला मालूम होता है। कौन कह सकता है कि यह आगे चल कर हमारे काम न आए! इसलिए इसके खाने-पीने का अच्छा इंतजाम करो और इसकी देख-भाल करते रहो" राजा ने अपने दरबारियों को हुक्म दिया और सपरिवार घर लौट गया। थोड़ी देर बाद सिपाही लोग अनगिनत गाड़ियों पर खाने-पीने की तरह-तरह की चीज़ें लाद लाए और वर्धमान के सामने उतार दीं। वर्धमान चार-पाँच कौर में ही सब कुछ चट कर गया।

वर्धमान को देखने के लिए आने वालों की हमेशा भीड़ लगी रहती थी। उनमें से कुछ शरारती लोगों ने पहले वर्धमान को तीरों से मारा। सिपाहियों ने उन शरारतियों को पकड़ कर वर्धमान के हाथ सौंप दिया ताकि उन्हें अच्छी सजा मिल सके। वर्धमान ने उनको उठा कर अपनी जेब में डाल लिया। देखने-वाले डर से काँपने लगे कि कहीं वह उन्हें पैरों तले कुचल कर भुरता न बना दे। लेकिन कुछ देर उनसे अपना मन बहला कर वर्धमान ने उन्हें हिफाज़त से नीचे रख दिया। यह खबर जब राजा के दरबार में पहुँची तो सब लोग बहुत खुश हुए।

राजा ने वर्धमान के लिए एक बिस्तर बनवाने का हुक्म दिया। तुरंत राज भर के सभी दर्जी आ जुटे और अपना सिर खपाने लगे। कोई मामूली बात तो थी नहीं। इसलिए कई लम्बे-चौड़े प्रस्ताव पास किए गए। आखिर छः सौ छोटे छोटे बिस्तर बनाए गए और गाड़ियों में लाद कर मन्दिर के पास लाए गए। मन्दिर के अहाते में उन सब को

मिला कर एक बड़ा बिस्तर बनाया गया। ऐसे पचास बिस्तर मिला कर वर्धमान के लायक एक छोटा बिस्तर बना। मुलायम करने के लिए इसी तरह के चार बिछौने एक पर एक रख कर सी दिए गए। चादरें भी इसी तरह बनाई गईं। उस देश की कई सौ चादरें, जो वर्धमान की जेब-रूमाल से बड़ी न थीं, मिला कर सी दी गईं और बिछाने के लिए एक चादर तैयार कर ली गई। वैसी दस बारह चादरें मिला कर ओढ़ने की चादर भी तैयार हो गई।

वर्धमान को बौनों की बोली सिखाने के लिए बड़े-बड़े पंडित नियुक्त किए गए। उस के लिए देशी पोशाक बनाने का काम तीन सौ दर्जियों को सौंपा गया। उसके सामने रोज एक बार राजा साहब के घुड़सवारों की कवायद होने लगी जिस से घोड़े उस को देख कर भड़क न जाएँ।

इस 'मानवी-पर्वत' को देखने के लिए दूर-दूर के गाँवों से लोग इस तरह आने लगे मानों कोई मेला लगा हो। मन्दिर के आस-पास की सड़कों पर भीड़ के मारे पैर रखने तक की गुंजाइश न थी। वर्धमान की नाकों दम हो गया था। इसलिए उसको देखने के लिए पुर्जी निकाली गई। अब बिना पुर्जी के कोई उसे देख न सकता था। इस तरह
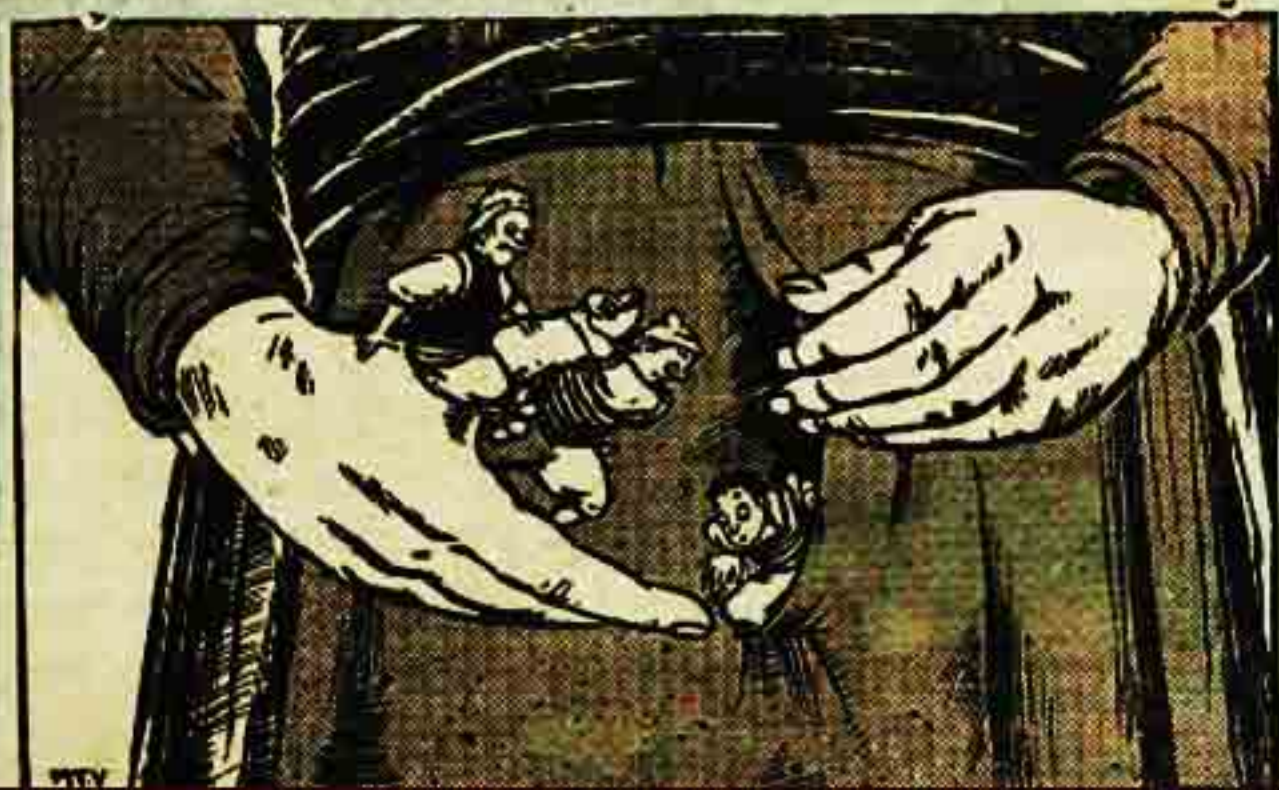
धीरे-धीरे भीड़ घटने लगी। नहीं तो शायद उसका खाना-पीना भी हराम हो जाता।

अब लोग उसे देख कर पहले की तरह डरते न थे। उसके पास आने में उन्हें अब खुशी होती थी। दस-पाँच लोग एक झुण्ड बना कर आते और उस की हथेलियों पर चढ़कर नाचते-गाते। बच्चे उस के लंबे-लंबे बालों में छिप कर आँख-मिचौनी खेलते थे।

धीरे-धीरे वर्धमान उस देश की बोली समझने लगा। राजा अक्सर उसे देखने आता और उसके कंधे या हाथों पर चढ़ कर बातचीत करता। वह वर्धमान को सराहता कि वह उसके देश-वासियों के साथ बहुत अच्छा सलूक कर रहा है। राजा को प्रसन्न देख कर वर्धमान कहता—"महाराज! मुझे यहाँ सब तरह का आराम है। आपकी कृपा से किसी चीज़ की कमी नहीं है। किंतु मेरी एक छोटी सी विनती है। अगर मेरे हाथ-पैर की हथकडी-बेडियाँ भी काट दी जाएँ तो बड़ा अच्छा हो।" यह सुन कर राजा कहता—"अच्छा, अच्छा! धीरे २ सब कुछ हो जाएगा" और मुँह चुरा कर चला जाता।

इस की एक वजह थी। राजा के दरबारियों में कुछ ऐसे लोग भी थे जिनकी

तुमसे डरने की कोई जरूरत नहीं, तभी वे तुम्हारी रिहाई के लिए राजी होंगे। इस के लिए तुम्हारी तलाशी लेना जरूरी है। लेकिन मेरे सिपाही जबर्दस्ती तो तुम्हारी तलाशी ले नहीं सकते! इसलिए बोलो, क्या तुमको तलाशी देना मंजूर है!''

वर्धमान राजी हो गया। दो सिपाही उसकी तलाशी लेने आए। उसने उनको उठा कर अपनी सभी जेबों में घुमा दिया। तलाशी लेकर वे लोग राजा के पास गए और बोले—''महाराज! 'मानवी-पर्वत' की जेबों में हमें बड़ी अजीब अजीब चीजें दिखाई दीं। पहली जेब में हमें एक बहुत बड़ी कालीन दिखाई दी जो महाराज के सोने के कमरे में बिछाई जा सकती है। (वह वर्धमान की रूमाल थी।) उसी जेब में हमें सोने के बड़े बड़े गोल-मटोल पहिए दिखाई दिए। उन पहियों पर कुछ चित्र और अक्षर खुदे हुए थे। (ये अशर्फियाँ थीं।) उसी जेब में हमें चाँदी का एक बड़ा संदूक दिखाई दिया। उसे जब खोल कर देखा तो उसमें मिट्टी सी काली, बारीक बुकनी भरी हुई थी। जब हमने उसमें उतर कर देखा तो मारे छींकों के हमारी नाक में दम हो गया।

आँखों में वर्धमान काँटे-सा खटक रहा था। वे सोचते थे कि ऐसा मजबूत आदमी अगर जिंदा रहा तो कभी न कभी यह राज हड़प लेगा। वर्धमान को भी कानों-कान यह हाल मालूम हो गया। लेकिन उसने सोचा—''जब खुद राजा मेरा दोस्त है, तब ये लोग मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं!'' इसलिए दूसरे दिन जब राजा उससे मिलने आया, तो उसने फिर वही बात कही। राजा ने जवाब दिया—''मैं खुद यही चाहता हूँ। लेकिन मैं अकेला कुछ नहीं कर सकता। मेरे मंत्री, मेरे दरबारी, सभी लोग तुम्हारा नाम सुनते ही भड़क उठते हैं। जब उन्हें मालूम हो जाएगा कि

(वह सुँघनी की डिबिया थी।) उसी जेब में हमें एक और चीज़ मिली जो देखने में एक सीढ़ी सी लगी। (यह एक कंघी थी।) उसकी कमर से कोई ऐसी चीज लटक रही थी जो देखने में एक जहाज के मस्तूल सी मालूम हुई। न जाने, वह किस काम की है !" (यह तलवार की म्यान थी।)

राजा तीन हजार हथियार-बंद सिपाहियों के साथ इन चीजों पर कब्जा करने आया। वर्धमान ने अपनी सब चीजें उसे दे दीं और जब वह जाने लगा तब म्यान से तलवार निकाल कर उसको एक बार दिखा दी। तलवार की चमक से सिपाहियों की आँखें चौंधिया गईं। जो लोग सब से आगे थे उन में से कुछ बिल्कुल अन्धे हो गए। राजा ने तुरंत तलवार म्यान में रखवा दी और उसे भी अपने कब्जे में कर लिया।

दो तीन दिन बाद वर्धमान ने वामन-भाषा में एक दरख्वास्त लिखी। उस दरख्वास्त में उसे छोड़ देने की विनीत प्रार्थना थी।

दरख्वास्त मंजूर तो हुई, लेकिन कुछ शर्तों के साथ। वे शर्तें थीं:

'मानवी-पर्वत' को राजा का हुक्म लिए बगैर देश छोड़ कर नहीं जाना होगा। अगर वह राजधानी में प्रवेश करना चाहे तो दो घंटे पहले ही सूचना दे; ताकि लोगों का आना-जाना बंद करके उसके लिए सड़कें खाली रखी जायें। उसे खास बड़ी सड़कों पर ही चलना होगा। वह हरे-भरे मैदानों और खेतों में लोट-पोट न सकेगा। उसे ख्याल रखना होगा कि कोई आदमी, जानवर या किसी की जायदाद उसके पैरों तले न कुचली जाय।

जब दूसरे देशों से लड़ाई छिड़ेगी तो उसे इस देश की ओर से लड़ना होगा।

वर्धमान ने ये सब शर्तें मान लीं, तब कहीं उसे छुटकारा मिला। [संक्षेप]

पुराने ज़माने की बात है। एक गाँव में धर्मपाल नाम का एक व्यापारी रहता था। उस के जैसा धर्मात्मा और बात का सच्चा आदमी मिलना मुश्किल था। दीन-दुखियों की सहायता करने में उससे बढ़ा-चढ़ा और कोई न था। सचमुच जैसा उसका नाम था वैसा ही उस का काम भी। इसलिए उस गाँव के ही नहीं, बल्कि आस-पास के गाँवों के लोग भी उस की बड़ी इज़्ज़त करते थे। बदमाश, चोर और डाकू भी उसका नाम सुनते ही आदर से सिर झुका लेते थे।

पहले धर्मपाल के कोई संतान न थी। मुद्दत के बाद जब उस के एक लड़का हुआ तो उसने उसका नाम राजपाल रखा। इकलौता बेटा था; इसलिए धर्मपाल ने उसे बड़े लाड-प्यार से पाला।

यह राजपाल बड़ा शरारती निकला। उस का पिता जितना शरीफ़ था वह उतना ही बदमाश साबित हुआ। ज्यों-ज्यों उसकी उम्र बढ़ती गई, त्यों-त्यों उसकी दुष्टता भी। हर साल वह कुछ न कुछ बुरी बातें सीखता जाता था। उस के पिता ने उस को बहुत कुछ समझाया-बुझाया। लेकिन उसने उनकी बातों पर कोई ध्यान न दिया। उस के पिता अमीर आदमी थे, इसलिए उसे रुपये-पैसे की कमी न थी। बस, वह रुपया पानी की तरह बहाने लगा। जहाँ रुपये-पैसे की कमी न हो वहाँ यार-दोस्तों की क्या कमी! जिस तरह गुड़ की गंध पाते ही चींटियाँ जमा हो जाती हैं, उसी तरह पैसेवालों के पास यार-दोस्त भी अपना अड्डा जमा लेते हैं। इन यार लोगों ने राजपाल को दुनियाँ भर की बुरी लतें लगा दीं। वह निधड़क शराब भी पीने लगा। रात-रात भर जुआ खेलता था। धीरे-धीरे उसकी तंदुरुस्ती बिगड़ने लगी। उसका चेहरा पीला पड़ने लगा और वह दिन-दिन दुबला हो चला।

बी० परमेश्वर राव

पिता ने रुपये-पैसे मिलने का रास्ता बंद कर दिया। उन्होंने ऐसा इंतज़ाम किया जिससे एक कानी-कौडी भी उस के हाथ न लगे। अब राजपाल के दिन बडी मुश्किल से कटने लगे। जब यारों ने देखा कि उसके पास रुपये-पैसे नहीं हैं तो वे उस से कतराने लगे। यहाँ तक कि कुछ ही दिनों में राजपाल को उस के सब दोस्तों ने छोड दिया। वह बिलकुल अकेला पड गया। जब बाजार से घूम फिर कर घर आता तो पिता की झिड-कियाँ सुननी पडतीं। आखिर उस का जीना दूभर हो गया। एक रात सब की आँख बचा कर वह घर से भाग निकला।

उस के पिता उस की यह हालत देखकर बडे परेशान हुए। उन्होंने उसे अब तक कई बार समझाया-बुझाया था। लेकिन कभी जोर से डाँटा-डपटा न था। वे सोचते थे— लडका है, आगे चलकर खुद सुधर जाएगा। पर जब उसके सुधरने का कोई लक्षण न दीख पडा और जब उसकी तंदुरुस्ती तेजी से बिगडने लगी, तब वे चुप न रह सके। एक दिन उन्होंने उसे अपने पास बुलाया और खूब खरी-खोटी सुनाई। लेकिन राजपाल ने उनकी झिडकियों की कोई परवाह न की। वह अपनी हरकतों से बाज न आया। तब लाचार होकर उस के

सवेरे जब धर्मपाल उठा तो देखता क्या है कि लडका लापता है। वह बहुत दुखी हुआ। उस के हृदय को बहुत चोट पहुँची। फिर भी पिता का प्यार कैसे छूटता! उसने अपने नौकरों को बुलाया और उन्हें बहुत-सा रुपया देकर कहा—"देखो, राजपाल घर से भाग गया है। तुम लोग उसका पता लगा कर चुपचाप उसके पीछे हो जाओ। तुम देखते रहो कि उसको किसी चीज़ की कमी या किसी तरह की तकलीफ़ न हो।"

नौकरों ने राजपाल का पता लगा लिया और वे उस के पीछे हो गए। राजपाल चलते

चलते एक गाँव में पहुँचा। उसे बड़े जोर की भूख लगी हुई थी। लेकिन पास एक कानी-कौड़ी भी न थी। जेबें बिलकुल खाली थीं। अब वह क्या करे? उसके सामने ही मिठाई की एक दूकान थी। मिठाइयाँ देख कर उसके मुँह में पानी भर आया। उस ने जा कर दूकानदार से पूछा—"क्यों भाई! क्या थोड़ी-सी मिठाई मुझे दोगे?"

"हाँ, हाँ, दूँगा क्यों नहीं? आओ, जितनी चाहिए खा लो!" दूकानदार ने कहा।

"पर मेरे पास तो एक कानी-कौड़ी भी नहीं!" राजपाल ने जवाब दिया।

"कुछ परवाह नहीं, पैसे तुमसे माँगता कौन है?" यह कह कर दूकानदार ने बड़े प्रेम से सभी मिठाइयाँ दीं। राजपाल ने भर-पेट मिठाई खाई। फिर दूकानदार को धन्यवाद दे कर चलता बना। असल में वह दूकान धर्मपाल के नौकरों की थी। उन्होंने जब देखा कि राजपाल भूख से बेहाल है तो उन्होंने सामने ही एक मिठाई की दूकान खोल दी।

दोपहर होते-होते राजपाल एक नदी के किनारे पहुँचा। नदी लबालब भरी हुई थी। राजपाल यह नदी पार होना चाहता था। लेकिन पार हो तो कैसे? इतने में उस पार से एक नाव आ गई। नाव के मल्लाहों ने राजपाल को देख कर कहा—"आओ, हम तुम्हें पार उतार दें!"

"पर मेरे पास तो फूटी कौड़ी भी नही है" राजपाल ने कहा।

"कोई हर्ज नहीं। हम तुमसे पैसा नहीं माँगते।" उन्होंने कहा और राजपाल को पार उतार दिया। राजपाल ने उनको धन्यवाद दिया और अपनी राह ली।

ये मल्लाह भी धर्मपाल के नौकर ही थे। जब उन्होंने देखा कि राजपाल को नदी पार

करनी होगी तो उन्हों ने एक नाव किराए पर ले ली और राजपाल को पार उतार दिया।

शाम होते-होते राजपाल एक पहाड़ी के पास पहुँचा और धीरे धीरे उस पर चढ़ने लगा। थोड़ी देर के बाद चढ़ते चढ़ते वह बहुत थक गया और जब आगे न चढ़ा गया तो एक चट्टान पर बैठ गया। इतने में धर्मपाल के नौकर जो उसके पीछे पीछे आ रहे थे, एक डोली लेकर आए और बोले—"बाबू जी! अगर आप बहुत थक गए हों तो आइए, इस डोली में बैठ जाइए। हम आप को ऊपर पहुँचा देंगे।" राजपाल ने फिर बताया कि वह कुछ पैसे न दे सकेगा। लेकिन डोली वालों ने इस की कुछ परवाह न की और उसे डोली पर चढ़ा लिया।

इसी तरह बहुत दिनों तक धर्मपाल के नौकर राजपाल के पीछे लगे रहे और हमेशा उस की मदद करते रहे। आखिर राजपाल को शक हुआ कि 'ये लोग कौन हैं जो कदम कदम पर आकर मेरी मदद करते हैं? जरूर इसमें कोई न कोई रहस्य है!" यह सोच कर उसने एक बार अपनी मदद करने वालों से पूछा—"आप लोग कौन हैं और क्यों बार बार मेरी मदद करते हैं?" तब नौकरों ने कहा—"हम लोग आप के पिता जी के नौकर हैं। आप को परदेश में कोई तकलीफ़ न हो, इस ख्याल से उन्होंने हमें आप के पीछे भेज दिया है।"

नौकरों की ये बातें सुनते ही राजपाल बहुत पछताया। उसे बड़ा अफसोस हुआ और उस ने अब अपनी चाल-चलन सुधारने का दृढ़-निश्चय कर लिया। वह नौकरों के साथ-साथ तुरंत घर लौटा। घर पहुँचते ही वह पिता के पैरों पड़ गया और माफ़ी माँगी। उसने कहा—"पिता जी! मुझे माफ़ कीजिए! आज तक मैं ने बहुत शरारतें कीं। अब आगे से मैं आप का सच्चा सपूत बनूँगा।"

अपने इकलौते बेटे को राह पर आते देख धर्मपाल भी फूले न समाए। उन्होंने उसे उठा कर बड़े प्रेम से गले लगा लिया।

बंगाल में श्री गौरांग नाम के एक बड़े भक्त हो गए हैं। वे एक भक्त ही नहीं, बल्कि बड़े भारी पंडित भी थे। तर्क-शास्त्र में उन की बराबरी करने वाला कोई न था।

एक दिन श्री गौरांग किसी काम पर पड़ोस के एक गाँव की ओर जा रहे थे। बीच में एक नदी पड़ती थी। गौरांग एक नाव पर चढ़ गए और नदी पार करने लगे। नाव पानी को चीरती हुई धीरे धीरे आगे बढ़ने लगी। वहाँ का दृश्य बड़ा मनोहर था। नदी के दोनों किनारों पर घने पेड़ों की कतारें खड़ी थीं। दूर से पहाड़ों की चोटियाँ दिखाई देती थीं। चारों ओर हरियाली छाई हुई थी। नदी का पानी आइने सा साफ़ था और उस में किनारे के पेड़ों की परछाई दीख पड़ती थी। गौरांग इस दृश्य को देख कर तन्मय हो गए। उनकी खुशी का ठिकाना न रहा और वे बाहरी दुनिया को भूल गए।

इस हालत में किसी ने गौरांग की पीठ थपथपा कर उन्हें जगाया। गौरांग चौंक कर चारों ओर देखने लगे। नाव पर चढ़ते वक्त वे अपने विचारों में डूबे हुए थे; इसलिए उन्होंने और किसी ओर ध्यान नहीं दिया था। अब जब उन्होंने पीछे फिर कर देखा तो उन्हें अपने बचपन का साथी और सहपाठी गदाधर दिखाई दिया। उन्होंने कहा—'अरे! गदाधर! तू यहाँ कैसे? गुरूजी का आश्रम छोड़ने के बाद यह हमारी पहली मुलाकात है। भाई! तुम्हें देखकर तो मैं फूला नहीं समाता।'

दोनों मित्र बचपन की बातें याद करते करते अपनी सुध-बुध भूल गए।

"अच्छा, तुम्हें याद है, तुम ने गुरूजी से क्या वादा किया था? तुमने कहा था कि 'मैं एक ऐसा तर्क-शास्त्र लिखूँगा जिसे देख कर सारा संसार दाँतों तले उँगली दबा लेगा।'

सुशीला देवी

दी। उस के मुँह से कोई बात न निकली।

"यह क्या गदाधर? यह उदासी कैसी? इस में ऐसी कौन सी बात है, जिस से तुम्हें इतना दुख पहुँचा है? मैं तो तुम्हारा मित्र हूँ। अगर कोई बात हो तो तुम मुझ से कह सकते हो न?" गौरांग ने पूछा।

गदाधर ने कोई जवाब न दिया। उलटे उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। वह चुपचाप मुँह फेर कर आँसू पोंछने लगा। पर उसके आँसू नहीं रुके।

'लाखों किताबें पढ़ने और सैकड़ों किताबें लिखने से क्या फ़ायदा है, जब कि

क्यों? बोलो, याद है न?" गदाधर ने पूछा।

"हाँ, याद है! और मैं ने अपना वादा पूरा भी किया है। लो, यह देखो! तुम इसे पढ़ कर बहुत खुश हो जाओगे।" यह कहते हुए गौरांग ने एक पुस्तक गदाधर के हाथ में दे दी। गदाधर वह पुस्तक खोल कर बड़े उत्साह के साथ पढ़ने लगा। पहले उस के मुँह पर आश्चर्य के चिह्न दिखाई दिए। लेकिन पीछे उस पर उदासी झलकने लगी। थोड़ी देर के बाद वह आगे न पढ़ सका। उसने किताब बंद करके गौरांग को लौटा

मैं एक मित्र का दुख दूर नहीं कर सकता? हम बचपन में कितने सुखी थे? एक दूसरे को देखने से उस समय हमें कितनी खुशी होती थी? क्या हम आज भी उसी तरह सुखी नहीं हो सकते? बोलो, क्या तुम मुझे अपने दिल की बात न बतलाओगे?" गौरांग ने पूछा।

आखिर गदाधर चुप न रह सका। उसने कहा—"क्या कहूँ? गौरांग! मैं कौन सा मुँह लेकर यह बात सुनाऊँ? तो भी सुनो! मैं ने भी जीवन भर तपस्या करके तर्क-शास्त्रपर एक पुस्तक लिखी है। लेकिन आज तुम्हारी किताब पढ़ने के बाद मुझे पता चला कि

मेरी लिखी किताब किसी काम की नहीं है। हाय! अब मैं सोचता हूँ कि मेरी सारी मेहनत बेकार गई। ऐसी पुस्तक न मैं अब तक लिख सका और न आगे कभी लिख ही सकूँगा।" गदाधर एक ठंडी साँस भर कर चुप हो रहा।

इतने में काले काले बादल घिर आए। ऐसा मालूम होता था कि थोड़ी देर में ज़ोर से पानी बरसने लगेगा। इन दोनों मित्रों के हृदय में भी तूफ़ान चल रहा था। वे पानी की ओर देखते चुपचाप बैठे रहे।

इधर गौरांग मन ही मन सोच रहा था कि गदाधर का दुख क्योंकर दूर किया जाए? उसे कोई उपाय न सूझ रहा था। वह पुस्तक अपनी जाँघ पर रखे थोड़ी देर तक यों ही सोचता रहा। न जाने उसे अचानक क्या सूझा कि उसने किताब उठाकर नदी में फेंक दी।

गदाधर चिल्लाया—"गौरांग! यह तुमने क्या किया? क्या तुम ने समझा कि इससे मेरी उदासी दूर हो जायगी और मुझे खुशी होगी? तुम्हारे इस त्याग से तुम्हारा यश तो अमर हो गया, लेकिन मेरे मुँह पर कालिख पुत गई। सचमुच मुझे तुम्हारी पुस्तक देखकर तुम से ईर्ष्या हुई थी, लेकिन पल भर के लिए। क्या इतनी सी बात के लिए तुम ने संसार को एक अमूल्य पुस्तक से वंचित कर दिया? मैं ने सोचा था कि मैं अपनी पुस्तक गंगा में बहा दूँगा। पर तुमने खुद ही यह काम किया। हाय! तुम ने यह क्या किया? अब हाथ मल मल कर पछताने से भी क्या होगा?"

इस तरह वह बहुत शोक करने लगा। पर उस समय गौरांग के मुख पर एक दिव्य ज्योति खेल रही थी। उस ने कहा—"गदाधर! तुम कुछ भी सोच न करो! हम दोनों गुरु-भाई हैं। इसलिए

पुस्तक चाहे मैं लिखूँ या तुम, दोनों एक ही है। मैं चाहता हूँ कि संसार में तुम्हारी ही किताब मशहूर हो जाए। पंडित लोग उसे पढ़ें और तुम्हारा नाम सब जगह फैल जाए। फिर तुम बेकार क्यों सोच करते हो? इस के अलावा जब मैं अपनी किताब लिख रहा था तो मेरे मन में सवाल उठा कि मैं यह किताब क्यों लिख रहा हूँ? मैं आज तक उस सवाल का जवाब ढूँढ़ता ही रहा। यह पुस्तक नदी में फेंक कर मैं सिर्फ तुम को ही नहीं, बल्कि अपने आप को भी खुश करना चाहता था। उस किताब को पानी में फेंक कर मैं ने अपने अहंकार का नाश कर दिया। अहंकार का नाश करने में ऐसी लाखों किताबें नष्ट हो जाँय तो भी कोई हर्ज नहीं।

"गदाधर! तुम फिर एक बार हँस दो। मैं अपनी आँखों से एक बार फिर तुम्हारी हँसी देख लूँ; वही मेरे लिए सब से बड़ा सुख होगा।"

अब फिर दोनों के हृदय से दुख की परछाईं दूर हो गई और आनन्द का प्रकाश छा गया। दोनों फिर पानी में देखते चुपचाप बैठे रहे। पर फर्क यह था कि इस बार दोनों मित्र एक दूसरे के कंधे पर हाथ रख कर प्रेम के साथ बैठे हुए थे। गौरांग ने कहा—"इस संसार में सब लोग सुखी और सन्तुष्ट हों। इससे बढ़कर मुझे और क्या चाहिए! मेरा आदर्श यही है। तुम्हारे ओठों पर की हँसी देखने के लिए मैं ऐसी लाखों किताबें न्यौछावर कर सकता हूँ।"

"गौरांग! तुम्हारे त्याग का वर्णन करना मेरी सामर्थ्य से बाहर की बात है। मैं तो इतना ही कर सकता हूँ कि तुम्हारे त्याग की महानता संसार भर में प्रगट कर दूँ" गदाधर ने अपनी कृतज्ञता जताई।

सास और पतोहू की कहानी

बहुत पुरानी बात है। किसी देश में एक शहर था। उस शहर में एक ब्राह्मण-परिवार रहता था। उस ब्राह्मण की स्त्री और उस की माँ में बिल्कुल नहीं बनती थी। सास और पतोहू हमेशा आपस में झगड़ती रहती थीं। सास को पतोहू फूटी आँख न सुहाती थी। वह हमेशा उसे सताती रहती थी। उस ब्राह्मण के घर के पास एक बैंगन की बाड़ी थी। सास अक्सर बैंगन की तरकारी बनाती, लेकिन कभी अपनी पतोहू को नहीं देती थी। पतोहू को बैंगन की तरकारी बहुत पसन्द थी। लेकिन करती क्या! सास का पहरा कभी हटता नहीं था।

आखिर 'बिल्ली के भाग्य से छींका टूटा।' एक दिन सास अपनी बेटी को देखने के लिए नजदीक के एक गाँव में गई। पतोहू ने सोचा—बस, यही मौका है। झट बाड़ी से बैंगन तोड़ लाई। जल्दी जल्दी तरकारी बनाई और किवाड़-खिड़कियाँ सब बंद करके खुशी-खुशी खाने बैठ गई। लेकिन तकदीर खोटी थी। उसी समय सास ने आकर किवाड़ खटखटाया। अब तो पतोहू की जान निकल गई। उसने झट भात तरकारी सब कुछ एक खाली घड़े में डाल दिया और हाथ धोकर किवाड़ खोलने गई। किवाड़ खुलते ही सास अंदर आ गई। पतोहू पानी लाने का बहाना करके घड़ा लेकर बाहर निकली। लेकिन बाहर भी कहीं उसे ऐसी जगह न मिली जहाँ वह निश्चिंत होकर बैंगन की तरकारी खा सकती। आखिर बहुत सोच-विचार कर वह पास के एक काली-मंदिर में चली गई और एक अंधेरे कोने में बैठ कर खुशी-खुशी बैंगन की तरकारी उड़ाने लगी। काली माई को इस औरत का यह हाल देख कर बड़ा अचरज हुआ और उन्होंने दाँतों तले उँगली दबा ली।

नारायण लाल

चाट-पोंछकर खा लेने के बाद पतोहू उठी और घड़े में पानी भर कर घर जा पहुँची। दूसरे दिन काली के मंदिर का पुजारी पूजा करने आया तो देखता क्या है कि माँ दाँतों तले उँगली दबाए है। यह देख कर उसे बड़ा अचरज हुआ और तुरंत राजा के पास जाकर सारी बात कह सुनाई। राजा ने यही बात दरबारियों से कही। सुन कर सब लोग सन्न हो गए। एक ने कहा—"ज़रूर इस राज पर कोई न कोई भारी संकट आने वाला है। नहीं तो काली माँ दाँतों तले उँगली क्यों दबातीं!" यह बात सुन कर राजा डर गया और उँगली हटवाने के लिए बहुत से पूजा-पाठ करवाए। लेकिन कोई फ़ायदा न हुआ। तब राजा ने ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो कोई वह उँगली हटा देगा उसे बहुत बड़ा इनाम दिया जाएगा। बहुत लोगों ने वह इनाम पाने की कोशिश की। लेकिन कोई न पा सका।

पतोहू ने कहा—'मैं वह इनाम लूँगी। वह घड़ा लेकर निकली और सीधे मंदिर में जाकर काली-माँ से कहने लगी—'काली-माई! तुम तो सबकी माँ कहलाती हो! क्या तुम्हें मालूम नहीं कि कुछ बहुओं को सास से छिपा कर कभी-कभी कुछ खा लेने का मन होता है! क्या इतनी-सी बात के लिए तुम सब के आगे मुझे नीचा दिखाना चाहती हो! हटा लो वह उँगली! नहीं तो यह घड़ा तुम्हारे सर पर पटक दूँगी।' उसकी ऐसी बातें सुनकर काली-माई भी डर गईं और उन्होंने तुरंत ही दाँतों तले से उँगली हटा ली। यह खबर बिजली की तरह सारे नगर में फैल गई। सब लोग पतोहू की तारीफ़ करने लगे।

ज्यों ही राजा को यह खबर मिली, उसने पतोहू को आदर के साथ बुलाया और बहुत-

सा सोना-चाँदी, हीरे-जवाहरात आदि उसे भेंट किए। पतोहू यह सब लेकर फूली-फूली घर पहुँची। अब सास उसे देख कर मन ही मन जलने लगी। लेकिन बाहर से कह कुछ बोल नहीं सकती थी। क्योंकि आसपास के लोग अब पतोहू को करीब करीब एक देवी ही समझने लग गए थे। लोग आपस में कहने लगे—'इसका हुक्म तो काली-माई भी नहीं टालती हैं। तब हम इसी की पूजा क्यों न करें!' इस तरह अब उसे देखने के लिए बहुत दूर दूर के लोग आने और तरह-तरह की भेंट लाने लगे। यह सब देख कर सास मन में और भी जलने लगी। जब उसे कोई उपाय न सूझा तो उसने अपने बेटे के कान भरना शुरू कर दिया—"देख बेटा! तेरी औरत ज़रूर कोई चुड़ैल है। नहीं तो काली-माँ भी इससे क्यों डर जाती! हमको अपने बचाव के वास्ते कोई उपाय सोचना चाहिए। नहीं तो यह एक-न-एक दिन ज़रूर हम दोनों को खा जाएगी। अच्छा हो, अगर पहले ही हम इस से अपना पिंड छुड़ा लें।"

रोज़ ऐसी बातें सुनते-सुनते बेटे का मन भी बदल गया। उसने एक दिन अपनी माँ से पूछा—'अच्छा, तुम्हीं बताओ, इस चुड़ैल से बचने का क्या उपाय है!'

माँ ने एक उपाय सोचा और बेटे के कान में कह दिया। सुन कर बेटा तैयार हो गया।

एक रात माँ-बेटे दोनों ने मिल कर सोई हुई पतोहू के मुँह में कपड़ा ठूँस दिया। फिर उसे एक चटाई में लपेट कर रस्सी से बाँध दिया और उठा कर मरघट में ले गए। वहाँ उन्होंने सूखी लकड़ियाँ जमा करके एक चिता बनाई और फिर चटाई

किताबी कीड़ा

में लिपटी हुई पतोहू को उस पर लिटा दिया। लेकिन आग लगाने के लिए दियासलाई ढूँढने लगे तो मालूम हुआ कि दियासलाई घर पर ही भूल आए हैं। सास ने कहा—'बेटा, तुम यहीं रहो। मैं अभी घर से दियासलाई ले आती हूँ।' इस पर बेटे ने कहा—'माँ! तुम्हीं यहाँ रहो, मैं जाकर दियासलाई ले आता हूँ।' लेकिन माँ क्या बेटे से कम होशियार थी! दोनों दियासलाई लाना चाहते थे। कोई वहाँ रहने को तैयार न था। आखिर यह तै हुआ कि दोनों साथ-साथ घर जाकर दियासलाई ले आएँ। बस, पतोहू को वहीं छोड़कर दोनों घर लौट आए।

अब पतोहू ने धीरे-धीरे अपने सारे बंधन ढीले किए। आखिर किसी न किसी तरह रस्सी की गाँठें खुलीं और वह चिता पर से नीचे उतरी। पास ही लकड़ी का एक कुंदा पड़ा था। उसने उसे चटाई में लपेट कर उसी तरह बाँध दिया। उस मरघट के एक कोने में एक बड़ा पेड़ था। पतोहू उसी पर चढ़ गई और पत्तों की आड़ में छिप कर बैठ गई।

कुछ ही देर में उसके पति और सास दोनों दिया-सलाई लेकर लौटे। चिता पर चटाई ज्यों-की-त्यों पड़ी थी। उन्होंने झट उस में आग लगा दी। लकड़ी का कुन्दा जल उठा। उन्होंने समझा—डायन जलकर खाक हो गई और खुशी-खुशी घर लौट गए।

थोड़ी देर बाद जिस पेड़ पर पतोहू छिपी बैठी थी उसके नीचे कुछ चोर जमा हो गए। वे किसी धनवान के घर से अच्छे अच्छे गहने चुरा लाए थे और उस पेड़ के नीचे बैठ कर बँटवारा कर रहे थे। पतोहू उस समय पेड़ की डाल पर बैठी ऊँघ रही थी। अचानक उसके हाथ से डाल छूट गई और वह धड़ाम से नीचे आ गिरी। उसे देख कर चोरों ने समझा—कोई भूत है। बस, वे गहने वगैरह वहीं छोड़, जान लेकर भाग खड़े हुए। पतोहू ने एक-एक करके सब गहने पहन लिए और अपने घर की राह ली। घर पहुँच कर उसने किवाड़ खटखटाया। सास ने डरते-डरते दरवाजा खोला। सोने-जवाहर से लदी हुई अपनी

पतोहू को देख कर उसने समझा कि वह भूत बन कर लौट आई है। चिल्लाती हुई वह अन्दर भागी और गिरती-पड़ती जाकर अपने बेटे को जगाया। वह हड़बड़ा कर उठा और पूछने लगा—'क्या बात है!'

माँ ने सिसक कर कहा—'अरे! बहू भूत बन कर लौट आई है।' बेटे को विश्वास न हुआ। माँ ने फिर कहा—'तुमको विश्वास न हो तो बाहर जाकर देख न लो अपनी आँखों से!'' आखिर दोनों डरते-डरते बाहर निकले। देखा, सचमुच वही सजी-धजी खड़ी थी। दोनों उल्टे पैर अंदर भागे तो हँसकर पतोहू ने कहा—'डरिए मत! मैं भूत नहीं हूँ। मैं आपकी वही बहू हूँ। जब आप लोगों ने मुझे चिता में डाल दिया तो मैं सीधे स्वर्ग चली गई। वहाँ ससुर जी से भेंट हुई। वे मुझे देखकर बहुत खुश हुए और आप सबका कुशल-समाचार पूछा। मैंने उन्हें आप सब का हाल सुना दिया। तब उन्होंने कहा—अच्छा, अब तुम घर लौट जाओ और अपनी सास को मेरी खबर पहुँचा दो। कह देना—'ससुर जी कुशल से हैं और तुम्हारी राह देख रहे हैं।' जब मैं स्वर्ग से लौटने लगी तो उन्होंने ये सब गहने मुझे भेंट कर दिए।'

मेरे भी लम्बी मूँछे हैं!

यह कहकर वह एक-एक करके अपने गहने दिखाने और सास को ललचाने लगी।

उन रंग-बिरंगे, जग-मग करते गहनों को देख कर सास के मन में भारी उथल-पुथल मच गई। वह सोचने लगी—'यह चुड़ैल मेरे सब गहने ले आई! देखो तो इसका भाग्य! मैं जाती तो मुझे ही मिलते न ये गहने! लेकिन यह तो कहती है कि उन के पास ढेर के ढेर गहने हैं। तो मैं देर क्यों करूँ! क्यों न जल्दी जाकर सब बटोर लाऊँ!'

ऐसा निश्चय करके उसने कहा—'ओरी बहू, मेरा जी तुम्हारे ससुर जी को देखने के लिए तड़प रहा है। बेचारे अकेले स्वर्ग में कितना कष्ट उठाते होंगे! अच्छा तो यही होगा बेटा! अगर तुम मुझे भी उसी तरह चटाई में लपेट कर चिता में रख दो। मैं तुम्हारे पिताजी को देख कर जल्दी ही लौट आऊँगी।' बेटा भी माँ से कम होशियार न था। वह झट राजी हो गया।

आँखों में आँसू भर और स्वर्ग जाती सास के चरणों को छूकर पतोहू बोली—

'सासजी ! स्वर्ग में जाकर कहीं भूल न जाइएगा—जल्दी वापस आइएगा। नहीं तो रो-रोकर हम मर जाएँगे। आपके बौर यह घर हमें काटने लगेगा, ये गहने मार बन जाएँगे।'

बहू का यह प्रेम देखकर सासजी गद्‌गद् हो उठीं। वह कुछ कहना ही चाहती थीं कि बहू बीच में बोल उठी—'सासजी ! जो एक बार स्वर्ग पहुँच जाता है वह लौट आना नहीं चाहता। इसी से हमें डर होता है कि कहीं आप भी वहाँ जाकर हमें भूल न जाएँ।'

बहू की बातों से सास विह्वल हो गई। सचमुच उसे भी आँसू आ गए। बहू के सिर पर हाथ रखकर उसने आशीष दिया—'बहू, मैं वहाँ ज़्यादा दिन नहीं रहूँगी—हाँ, इन बैंगनों पर ख़्याल रखना बहू—मेरे आने तक तोड़ना नहीं। अच्छा, बहू एक बात तो कहो—क्या स्वर्ग में बैंगन मिलते हैं?'

बहू ने मुँह बिचका कर कहा—'नहीं, सास जी! बैंगन वहाँ नहीं मिलते। इसी से तो मैं आप को वहाँ जाने नहीं देना चाहती। मैं ही चली जाऊँगी। आप यहीं रहिए सास जी!'

सासजी के पेट में खल-बली मच गई—'अरे, यह तो बाकी गहने भी ले आना चाहती है।'

वह झट कहने लगी—'नहीं बहू, मैं वहाँ रहने थोड़े ही जाती हूँ! बात असल यह है कि मुझे तुम्हारे ससुरजी को देख आना है। बहुत दिन हो गए हैं।' अब पति-पत्नी दोनों ने मिल कर सास को चटाई में लपेट लिया। फिर सावधानी से मरघट में ले गए और चिता पर रख कर स्वर्ग भेज दिया। इस बार दियासलाई लाना कोई न भूला था।

बेटे ने बहुत दिनों तक माँ के वापस आने की राह देखी। लेकिन जब महीनों बीत गए और वह लौट कर नहीं आई तो उसने इंतजार करना छोड़ दिया और उसे धीरे-धीरे भुला दिया। उसकी स्त्री तो जानती ही थी कि वह कभी लौटने वाली नहीं। अब वह रोज बैंगन की तरकारी बनाती है और गा-गाकर खाती है।

जौ की रोटी

एक गाँव में एक गरीब ब्राह्मण रहता था। वह बड़ी मुश्किल से अपने दिन काट रहा था। उसे साग और सत्तू के सिवा कभी और कुछ खाने को नसीब न होता था। एक दिन उस ब्राह्मण और उस की स्त्री के मन में जौ की रोटी खाने की इच्छा हुई। लेकिन उन्हें अपनी इच्छा पूरी करने की कोई सूरत न दीखती थी। तब ब्राह्मण ने नज़दीक के एक वन में जाकर कुछ दिन तक घोर तप किया। आखिर भगवान का मन पिघला और उन्होंने ब्राह्मण को दर्शन देकर पूछा—'बोलो, तुम क्या चाहते हो?'

'भगवन! बहुत दिनों से मेरा मन जौ की रोटियाँ खाने का हो रहा है। आप ऐसा कोई वर दीजिए जिस से मुझे खूब जौ की रोटियाँ खाने को मिलें' ब्राह्मण ने कहा।

"अच्छा, तुम जाओ, किसी से जौ का एक दाना माँग लेना। फिर तुम्हें जितनी रोटियाँ चाहें मिल जाएँगी।" भगवान यह वर देकर अंतर्धान हो गए।

ब्राह्मण खुशी खुशी अपने गाँव पहुँचा। पहले उस ने एक बनिए की दूकान पर जौ का एक दाना माँग लिया और फिर घर का रास्ता लिया। चलते-चलते ब्राह्मण के हाथ का दाना एक से दो बन गया, फिर तीन और चार। यहाँ तक कि घर पहुँचते-पहुँचते उसके कंधे पर जौ का एक बोरा रखा था।

घर जाकर ब्राह्मण ने अपने कंधे पर का बोरा उतार कर नीचे डाला भी न था कि न जाने कहीं से और एक बोरा उस के कंधे पर आ गया। वह भी उतार कर नीचे रखा तो कंधे पर एक और था। उस के बाद तीसरा, चौथा,

बी. धनराज

फिर पाँचवाँ।.... ब्राह्मण बोरे उतारते गया। लेकिन उस के कंधे पर का बोरा ज्यों-का-त्यों बना रहा। यहाँ तक कि बोरे उतार कर रखते-रखते वह थक गया और हाँफने लगा। आखिर एक दीवार से टिक कर खड़ा हो गया।

इतने में ब्राह्मणी वहाँ आई और बोरे देख कर फूली न समाई। उस ने जल्दी से एक बोरा खोल कर थोड़ा सा जौ निकाल लिया और उन्हें चक्की में डाल कर पीसने लगी। पीसने के बाद जब उस ने आटा निकाल लिया तो देखा कि चक्की में आटा और जौ ज्यों-का-त्यों है। उसने फिर पीसा और आटा निकाल लिया। लेकिन चक्की ज्यों-की-त्यों भरी रही। आखिर जब वह पीसते-पीसते थक गई और अब न पीस सकी तो चक्की वहीं छोड़ कर, थोड़ा सा आटा लेकर गूँधने लगी। लेकिन यहाँ भी वही हाल हुआ। वह गूँधती-गूँधती थक गई, लेकिन आटा ज्यों-का-त्यों मौजूद था। आखिर वह थोड़ा सा गूँधा हुआ आटा लेकर बेलने लगी। लेकिन फिर वही हाल हुआ। बेलते-बेलते वह थक गई, पर आटा वैसा ही बना रहा। आखिर वह तवे पर एक रोटी सेंकने लगी। जब रोटी अच्छी तरह फूल गई तो उसने तवे से निकाल ली। लेकिन देखा कि और एक रोटी तवे पर है। वह रोटी निकालते निकालते थक गई; लेकिन तवे पर की रोटी वैसी ही बनी रही। गूँधा हुआ आटा वैसा ही पड़ा हुआ था। चक्की में के जौ वैसे ही पड़े थे। ब्राह्मण के कंधे पर बोरा वैसा ही मौजूद था।

इतने में एक पड़ोसिन बुढ़िया आग माँगने आई। उसे उस घर का हाल देख कर

बड़ा अचरज हुआ। इतने में उसे रोटियों की ढेरी दिखाई दी। देखते ही वह लपक गई। उसने एक रोटी हाथ में लेकर एक टुकड़ा तोड़ा और मुँह में डाल लिया। बस, अब क्या था! बुढ़िया चबा-चबा कर निगलती गई, पर मुँह में का टुकड़ा ज्यों-का-त्यों बना रहा। चबाते-चबाते उसका मुँह दुखने लगा। खाते-खाते उसका पेट फूलने लगा। पर मुँह में का टुकड़ा वैसा ही बना रहा। आखिर बुढ़िया बेदम होकर दीवार से टिक कर बैठ गई और ब्राह्मण को कोसने लगी—"मैं नहीं जानती थी कि यह ऐसा मुतहा घर है। मैं तो आग माँगने आई थी। न जाने, यह कौन-सी बला मेरे सिर पड़ गई। अभागा कहीं का! भाड़ में जाय तेरी रोटी!" बुढ़िया ने कहा।

"खूब बोली बुढ़िया! पर मैं किस को कोसूँ! मैं किसके आगे अपना दुखड़ा रोऊँ! मैं यह बोरा उठाए-उठाए मरा जा रहा हूँ। लेकिन उतार नहीं सकता। हे भगवान! अब मेरा रोटियों का शौक पूरा हो गया। अब कभी ऐसा वर न माँगूँगा।" यह कहते-कहते ब्राह्मण की आँखों में आँसू आ गए।

ब्राह्मण का यह कहना था कि सभी कुछ जहाँ का तहाँ गायब हो गया। उसके कंधे पर का बोरा गायब। चक्की में जौ नदारद। गूँधा हुआ आटा छू-मन्तर। तवे पर की रोटी न जाने कहाँ उड़ गई। बुढ़िया के मुँह में से रोटी का टुकड़ा काफूर हो गया। बस, ब्राह्मण जो जौ का दाना माँग लाया था वही बच रहा। उसने भगवान का नाम लिया और सुख की साँस ली।

बुढ़िया कुछ बड़बड़ाती हुई अपने घर चली गई।

किसी समय एक गुरू के पास एक भोला-भाला चेला पढ़ता था। गुरूजी के मुँह से जो कुछ निकलता वह उस को बिना सोचे-समझे सच मान लेता था।

एक दिन गुरूजी ने उसको पढ़ाया—"सर्वम् खल्विदं ब्रह्मम्। सारा संसार ब्रह्ममय है। मुझ में, तुझमें, ईंट-पत्थर में, पेड़-पौधों में कीड़े-मकोड़ों में, हर जगह, हर चीज में ब्रह्म है।"

चेले के मन में यह बात बैठ गई।

दूसरे दिन जब चेला बाहर चला तो देखा कि सामने से राजा का हाथी बेतहाशा दौड़ा आ रहा है और लोग डर के मारे भाग कर घरों में छिप रहे हैं। महावत हाथी पर से चिल्ला-चिल्लाकर कह रहा है कि 'हटो, भागो! यह हाथी पगला गया है!'

लेकिन चेले ने महावत की बात पर कान न दिया और हाथी के सामने चला गया। उसने सोचा—"मुझमें भी ब्रह्म है और इस हाथी में भी। ऐसी हालत में यह हाथी मेरा क्या बिगाड़ सकता है!"

लेकिन नज़दीक आते ही हाथी ने उसे सूँड से उठा कर नीचे दे पटका। बस, बेचारे चेले की कमर टूट गई। किसी तरह कराहते हुए गुरूजी के पास गया और सारा हाल सुना कर पूछा—"आप ने कहा था कि हर चीज में ब्रह्म है! तब हाथी ने मुझे क्यों दे पटका!"

गुरूजी ने जवाब दिया—"अरे, पगले! जब हाथी में ब्रह्म है तो क्या महावत में नहीं है? तू ने महावत की बात क्यों न मानी?"

चेला यह जवाब सुन कर लजा गया। अब उसकी समझ में आ गया कि दूसरों की बातों पर बिना सोचे-समझे विश्वास नहीं करना चाहिए। जरा अपने दिमाग से भी काम लेना चाहिए।

एक गाँव में छलियाराम नाम का एक बड़ा धूर्त ठग रहता था। नजदीक ही के एक दूसरे गाँव में एक और ठग रहता था, जिसका नाम था कपटीराम। दोनों लोगों को ठगने में एक दूसरे से बढ़कर थे।

संयोगवश ये दोनों एक दिन किसी जगह मिले। इस के पहले इन दोनों में कोई जान-पहचान न थी। लेकिन एक ही थैली के चट्टे-बट्टे थे न! इसलिए मिलते ही दोनों एक दूसरे को बड़े प्रेम से 'मामा' कहने लगे। लेकिन असल बात तो यह थी कि दोनों अपने मन में एक दूसरे को धोखा देने की सोच रहे थे। छलियाराम ने कपटीराम को न्योता देते हुए कहा—'आज रात हमारे यहाँ तुम्हारी दावत है। जरूर आना।'

छलियाराम ने उस रात को अपने घर अच्छे-अच्छे पकवान बनवाए और कहीं से चुरा कर लाई हुई एक सोने की थाली में मेहमान के लिए खाना परोसवाया। खाना खाते खाते कपटीराम ने जो थाली की ओर देखा तो उसकी आँखें चौंधिया गईं। उसने तुरंत मन में ठान लिया कि किसी न किसी तरह इस थाली को उड़ाना ही चाहिए। इधर छलिया क्या कुछ कम था! वह मेहमान को जबर्दस्ती ठूँस-ठूँसकर खिला रहा था; ताकि उसे खाना खाते ही गहरी नींद आ जाए और वह आसानी से उसकी जेब मार ले।

कपटीराम खाना खाने के बाद नींद का बहाना करके लेट रहा। छलियाराम ने सोचा—बस; यही मौक़ा है! उठ कर कपटीराम की कमर में हाथ डाल कर टटोला; पर रुपए की थैली का कहीं पता न चला। बेचारा हार गया और जा कर सो रहा।

उस के सोते ही कपटीराम उठा और सन्दूक का ताला तोड़ कर सोने की थाली

रामकिशन वर्मा

निकाल ली। फिर उसे अपने तकिए के नीचे रख कर आराम से सो रहा। थोड़ी देर में छलियाराम की आँख अचानक खुल गई तो उसकी नज़र सबसे पहले सन्दूक पर पड़ी। टूटा ताला देखते ही वह सब कुछ ताड़ गया। वह दबे पाँव उठा और कपटीराम के बिस्तर के नीचे टटोल कर देखने लगा। आखिर उसे तकिए के नीचे अपनी सोने की थाली मिली। उसने धीरे धीरे बड़ी सफ़ाई से थाली निकाल ली। फिर उसे एक छींके पर रख कर उसमें पानी भर दिया और अपनी चारपाई उस छींके के नीचे डाल कर सो रहा। बेचारे ने सोचा:—'अगर कोई थाली पर हाथ लगाएगा तो पानी मुझ पर छलकेगा और मैं जाग जाऊँगा।'

कपटी आँख बचा कर यह सब कुछ देख रहा था; क्योंकि वास्तव में वह सोया तो था नहीं! उसने छलियाराम को सो जाने दिया। फिर उठ कर चूल्हे में से थोड़ी राख उठा लाया और धीरे धीरे पानी में डालने लगा। बस, थोड़ी ही देर में राख ने सारा पानी सोख लिया। अब बिना किसी दिक्कत के उसने थाली नीचे उतार ली और नजदीक के एक तालाब में छिपा दी। फिर आकर चुपचाप ऐसे सो गया जैसे कुछ जानता ही न हो!

इतने में छलियाराम जागा और आँख खोलते ही छींके की ओर देखा तो थाली गायब! लेकिन वह भी कोई उल्लू का पट्ठा तो था नहीं! उठ कर तुरंत कपटीराम की चारपाई के पास गया और उसकी ओर गौर से देखने लगा। उसे कपटीराम के तलवों में कीचड़ लगा हुआ दिखाई दिया। वह तुरंत भाँप गया कि हो न हो, जरूर यह मेरी थाली तालाब में छुपा आया है। वह धीरे धीरे उसकी चारपाई के पास घुटनों के बल बैठ गया और पैर चाटने लगा, जिससे

मालूम हो कि वह पानी में कितनी गहराई तक पैठा है! क्योंकि वह जानता था कि उस के पैर पानी में जिस गहराई तक धँसे होंगे वहाँ तक चाटने में फीके लगेंगे और उसके बाद नमकीन। कपटीराम के पैर घुटनों तक फीके लगे। इस से छलियाराम ने जान लिया कि वह घुटनों तक पानी में पैठा है। वह तुरंत दौड़ता हुआ तालाब की ओर गया और घुटनों तक की गहराई में इधर उधर खोजने लगा। जल्दी ही उसकी मेहनत फली और वह थाली लिए खुशी खुशी घर लौटा।

इसी बीच कपटीराम की आँखें खुलीं तो देखता क्या है कि छलियाराम का बिस्तर खाली है। वह समझ गया कि जरूर वह थाली की खोज में गया होगा। उसने सोचा—'यह तो बड़ा गुरु-घंटाल मालूम होता है। भला तो इसी में है कि दुश्मनी छोड़ कर मैं इसे अपना साझीदार बना लूँ।'

छलियाराम दरवाजे पर आया तो कपटी उसके सामने जाकर बोला—'मामा! अब तक मैं तुम को बुद्धू समझे हुए था। लेकिन तुम तो बड़े घाघ निकले। आओ, आज से हम दोनों दोस्ती कर लें। आगे से

हम दोनों साझे पर काम करें तो खूब लाभ होगा। जो कुछ मिलेगा दोनों आधा आधा बाँट लेंगे।' इस बात पर छलियाराम भी राजी हो गया।

एक दिन एक शुभ-घड़ी में ये दोनों दोस्त चोरी करने चले। राह में कपटी ने छलिया से कहा—'देखो! मामा! मैंने सुना है कि हमारे गाँव का लाला दयाराम मर गया है। हम लाला के भाई और उसकी स्त्री के पास जाकर कहेंगे कि लालाजी ने हम से एक हजार रुपया उधार लिया था और चुकाया नहीं था। वे तो अचानक मर गए; इसलिए अब आप हमारा रुपया चुका दीजिए। लेकिन इसमें एक दिक्कत है। वे लोग अब

पूछेंगे कि तुम्हारी बात का सबूत क्या है तो हम क्या जवाब देंगे ?'

'वह जवाब भी तुम्हीं सोच निकालो न ?' छलियाराम ने कहा ।

"अच्छा तो सुनो, जहाँ लालाजी की चिता जलाई गई थी वहीं एक गड्ढा खोद कर मैं तुम्हें गाड़ दूँगा । डरो नहीं, साँस लेने के लिए एक ओर एक छोटा सा छेद रख छोड़ूँगा । फिर मैं लालाजी के भाई और स्त्री के पास जाकर रुपया माँगूगा और जब सबूत चाहेंगे तो कहूँगा—"आइए, जहाँ लालाजी जला दिए गए थे वहाँ जाकर मैं पुकारता हूँ। अगर वे हामी भर देंगे तो आप मेरा रुपया दीजिएगा; नहीं तो नहीं । हाँ, जब मैं उन्हें यहाँ ले आऊँगा और लालजी का नाम लेकर पुकारूँगा तो तुम्हें जवाब देना होगा । मैं तुम से पूछूँगा कि तुम ने मुझ से एक हजार रुपया उधार लिया था कि नहीं ? तब तुम हामी भर देना । अगर हमारी चाल चल गई तो दोनों आधा-आधा बाँट लेंगे ।" कपटीराम ने कहा ।

छलिया राजी हो गया । दोनों अपनी होशियारी पर फूले न समाए । कपटी ने गड्ढा खोदा और छलिया को उसमें छिपा कर लालजी के घर गया । जो सोचा था वही हुआ । लालजी के भाई ने कहा कि बिना किसी सबूत के हम रुपया नहीं चुका सकते । तब कपटी उनको मरघट में ले आया और लालजी का नाम लेकर पुकारने लगा । "क्यों क्या काम है ?" छलियाराम ने गड्ढे के अंदर से पूछा । "क्यों लालाजी ! आपने मुझ से एक हजार रुपया उधार लिया था कि नहीं ?" कपटीराम ने पूछा । "हाँ ! हाँ ! लिया क्यों नहीं था ?" छलियाराम ने गड्ढे के अंदर से जवाब दिया । बेचारे लालाजी के भाई ने समझा—सचमुच लालजी ही जवाब दे रहे हैं । उसने कपटीराम को घर ले जाकर एक हजार गिन दिया ।

कपटीराम लौट कर फिर वहाँ आया जहाँ जमीन के अंदर छलियाराम उसकी राह देख रहा था। उसने एक बड़ा पत्थर उठा कर गड्ढे के मुँह पर रख दिया जिससे वह आसानी से बाहर न निकल सके। फिर रुपए की थैली उठा कर नौ-दो-ग्यारह हो गया।

भीतर से बेचारा छलियाराम 'मामा' 'मामा' पुकारता ही रहा। लेकिन वहाँ था कौन! उस का मामा तब तक आधा मील चला गया था।

छलियाराम समझ गया कि उसने धोखा खाया है। बड़ी मुश्किल से उस ने एक ओर छेद किया और अधमरा सा गड्ढे के बाहर आया। उसने तै कर लिया कि किसी न किसी तरह जरूर इसका बदला लेना चाहिए।

गाँव के बाहर जाने के लिए उस मरघट से होकर एक ही राह थी। छलियाराम अपने कपटी मामा को खोजता उसी राह से चला।

एक हजार की थैली बहुत दूर तक अकेले ढो ले जाना आसान काम नहीं था। इसलिए कपटीराम ने एक बैल भाड़े पर लिया और रुपयों की थैली उस पर लाद कर खुशी-खुशी चला।

छलियाराम ने बहुत दूर से कपटीराम को देख लिया। वह सोचने लगा—किस सूरत से इसे मजा चखाया जाय! इतने में उसे एक घर के बाहर बरामदे में एक जोड़ा चप्पल रखा हुआ दिखाई दिया। उसने जल्दी से उसे उठा लिया और बेतहाशा दौड़ता हुआ कपटीराम से भी आगे निकल गया। आगे जाकर उसने एक चप्पल रास्ते में गिरा दिया। फिर वहाँ से थोड़ी दूर और आगे जाकर उसने दूसरा चप्पल भी गिरा दिया और खुद पास ही एक खेत में छिप कर तमाशा देखने लगा।
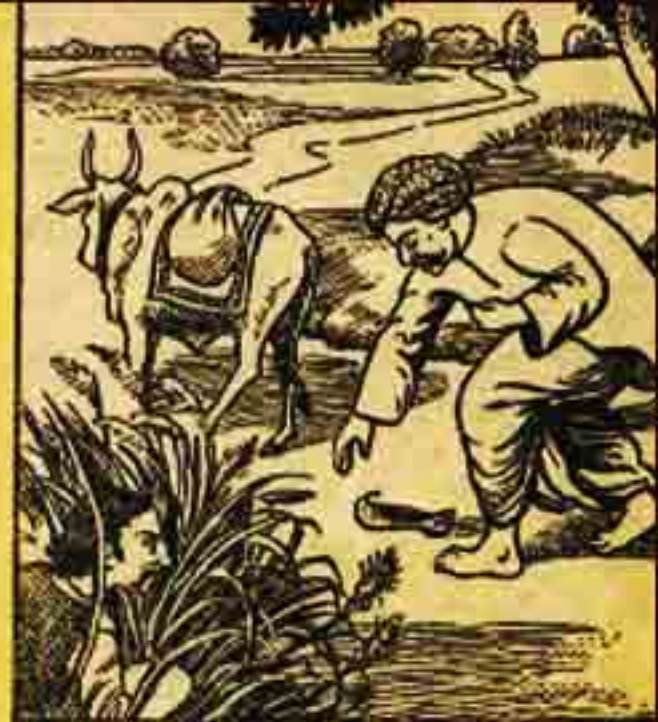
चंद मिनट में कपटीराम बैल को हाँकता वहाँ आया तो उसकी नजर उस चप्पल पर पड़ी। चप्पल नया था। लेकिन उसने

सोचा—"एक चप्पल लेकर क्या करूँगा ?" यह सोच कर उसने उस चप्पल को छुआ तक नहीं। लेकिन थोड़ी दूर जाने पर उसे दूसरा चप्पल भी दिखाई दिया। तब वह पछताने लगा—'अरे, मुझे वह चप्पल उठा लेना चाहिए था। लेकिन मैंने सोचा, एक चप्पल उठा कर क्या करूँ ! अच्छा, अब भी कुछ बिगडा नहीं है। बैल को इस पेड से बाँध दूँगा और दौड कर दूसरा चप्पल उठा लाऊँगा।' यह सोचकर उसने बैल को पेड से बाँध दिया। वह जगह बिल्कुल सुनसान थी और रुपए की थैली भी भारी थी; इसलिए उसने उसे बैल की पीठ पर ही छोड दिया और दूसरा चप्पल लाने पीछे दौडा।

उस के आँखों की ओट होते ही छलियाराम बाहर निकल आया और जल्दी जल्दी बैल को भगा ले गया। थोडी दूर ले जाकर उसने बैल को छोड दिया और रुपए की थैली लेकर एक पुआल की ढेरी में छिप रहा।

कपटीराम जब लौटा तो बैल लापता था। वह समझ गया कि हो न हो, यह छलियाराम की चालबाजी है। उसके सिवा और कोई यह काम नहीं कर सकता। वह इधर उधर ढूँढते हुए उसी राह से चलता गया। राह में जब उसे पुआल की ढेरी दिखाई दी तो उसने सोचा—"आसपास में तो इस पुआल की ढेरी के सिवा छिपने लायक कोई जगह नहीं है। अगर वह छुपा होगा तो इसी में।" यह सोच कर वह उस पुआल की ढेरी को उलटने पुलटने लगा। जब छलियाराम ने देखा कि उस का भण्डा फूटने पर ही है और वह किसी तरह भाग नहीं सकता तो वह खुद बाहर निकल आया।

उसे देखकर कपटीराम ने कहा—'देखो, हम आपस में बेकार क्यों परेशान हों ? आओ, यह रुपया आधा आधा बाँट लें।' इस पर छलिया राम भी राजी हो गया। दोनों वह रुपया आपस में बाँट कर खुशी खुशी घर चले गए।

क्या चाहिए ?

★

पंडित जी को

पोथी-पत्रा
चंदन-टीका
नया जनेऊ
बड़ी खड़ाऊँ
सब से बढ़कर,
थोड़ी सुँघनी चाहिए !

माता जी को

सुन्दर साड़ी
कर में चूड़ी
सर पर रोली
हँसी-ठिठोली
सब से बढ़कर,
मीठी बोली चाहिए !

बाबू जी को

अपनी ऐनक
बड़ी किताबें
कुरसी-मेजें
कलम-दवातें
औ गुस्से में,
छड़ी हाथ में चाहिए !

देवन दा' को

कोट-कमीज़ें
जूते-मोजे
एक फाउंटेनपेन
बढ़िया साबुन
रोज शाम को
सैर-सपाटे चाहिए !

हम बच्चों को

दूध-मलाई
खूब मिठाई
★ हँसना-गाना ★
शोर मचाना,
सबसे बढ़कर
'चन्दामामा' चाहिए !

बंदर से धोखा खाने के बाद बगुले ने सोचा कि किसी न किसी तरह इस का बदला लेना चाहिए। इसलिए उस ने कहा कि इस बार मैं जैसे जैसे करूँगा वैसे वैसे तुम्हें भी करना होगा।
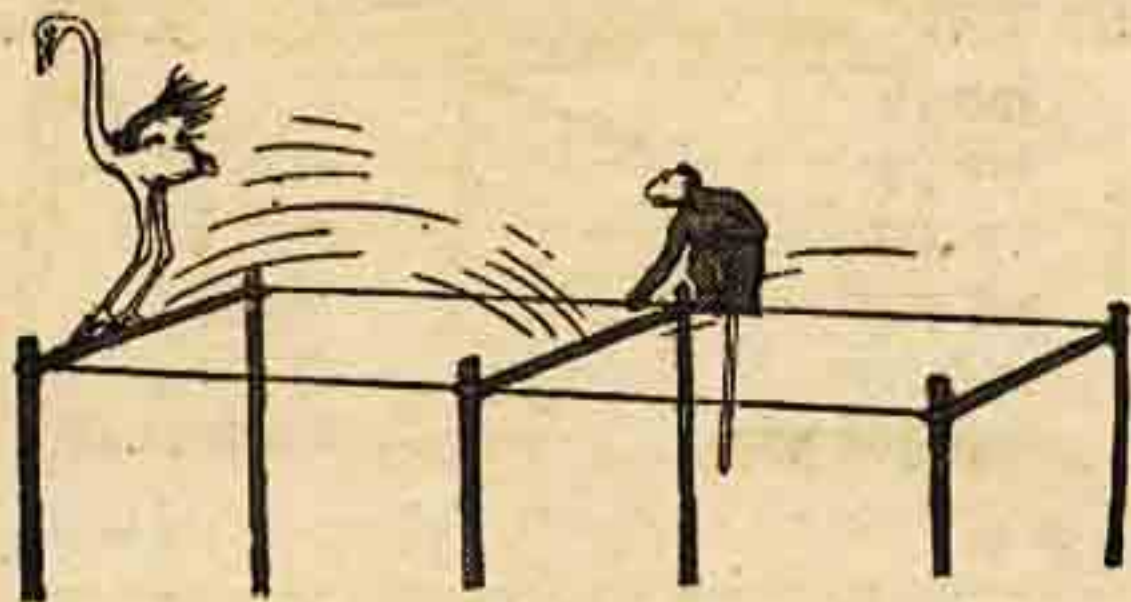
पहले बगुले ने बीच की छड़ पर से कूद कर बंदर से कहा—
"तुम भी वैसे ही कूदो तो, देखें!"
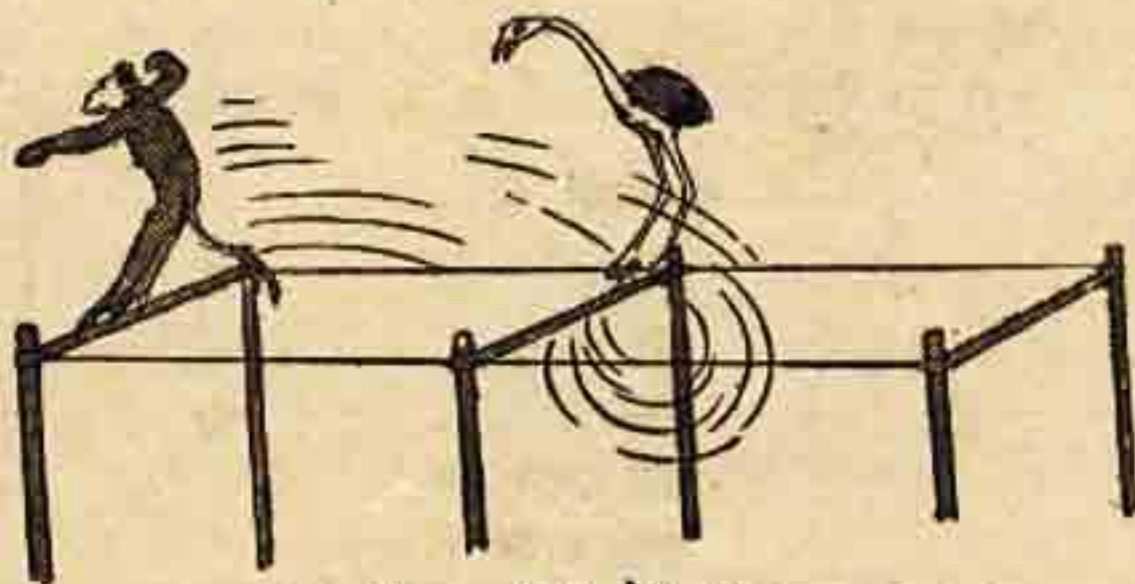
बंदर भी आसानी से वैसे ही कूद गया।
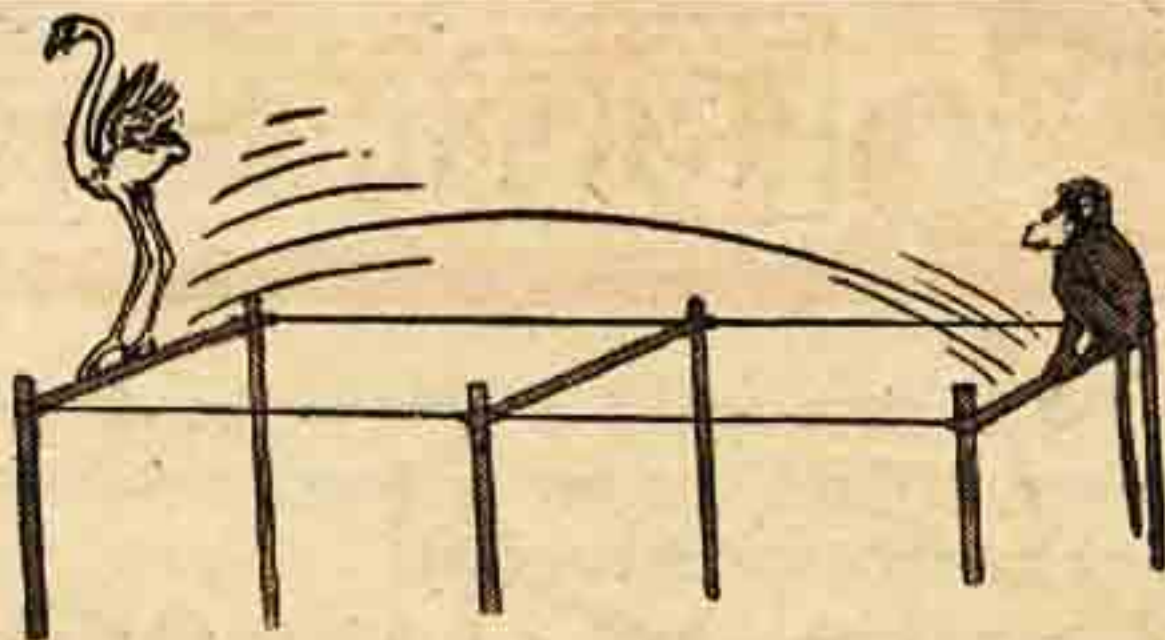
इस बार बगुला पहली छड पर से एक दम आखरी छड पर कूद गया ।
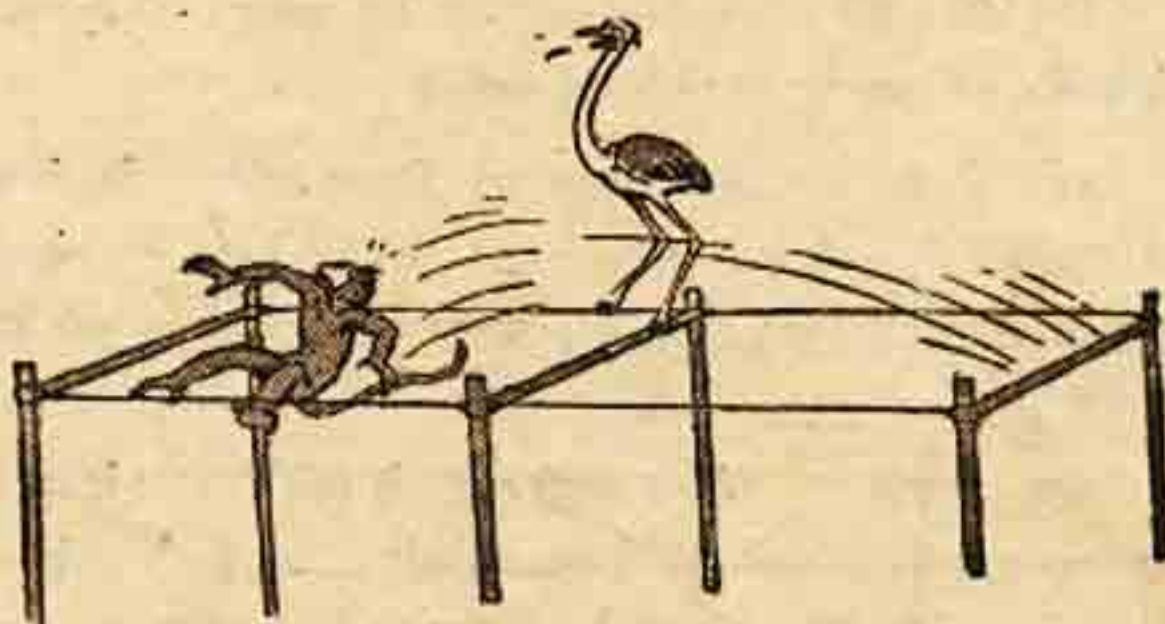
बंदर ने भी उसी तरह कूदना चाहा ; पर धड़ाम से नीचे आ गिरा ।

बच्चों की देख-भाल

बड़ों को बच्चों की खुराक की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए। बच्चे का स्वास्थ्य अधिकतर उस की खुराक से ही बनता और बिगड़ता है। बच्चे को नीरोग और हृष्ट-पुष्ट बनाने के लिए अच्छे खुराक की जरूरत होगी।

बिल्कुल छोटे बच्चों के लिए माँ के दूध से बढ़ कर कोई खुराक नहीं है। हाँ, जरूरत पड़ने पर गाय का दूध भी दिया जा सकता है। विज्ञान कहता है कि शरीर–पोषण के लिए जिन जिन चीज़ों की आवश्यकता है वे सभी दूध में हैं। इसलिए इस बात का ख्याल रखना चाहिए कि बच्चों को ज्यादा से ज्यादा दूध पीने को मिले।

छोटे छोटे बच्चों को चाय और काफी नहीं देनी चाहिए। ये बच्चों का हाजमा बिगाड़ देतीं और तरह तरह की बीमारियाँ पैदा करती हैं।

बच्चों को घी और मक्खन ज्यादा नहीं खिलाना चाहिए। तेल से तली हुई मसालेदार तरकारियाँ भी नहीं देनी चाहिए। खाने की चीज देखते ही बच्चे का मन ललच जाता है और वह हठ करने लगता है। इसलिए बच्चे को समय पर खाने की आदत डालनी चाहिए।

खाना खिलाते वक्त बच्चे को अपनी खुशी से खाने दो। उसे भूत का नाम लेकर या डरा-धमका कर खिलाने की कोशिश मत करो। जरूरत से ज्यादा खाने से बच्चा कै कर देगा। ठूँस-ठूँसकर खिलाने से बच्चा या तो पेटू बन जाएगा, या बदहज़मी से तरह तरह की शिकायतें पैदा हो जाएँगी। इन बातों का जरूर ख़्याल रखो।

तुम्हारी दीदी
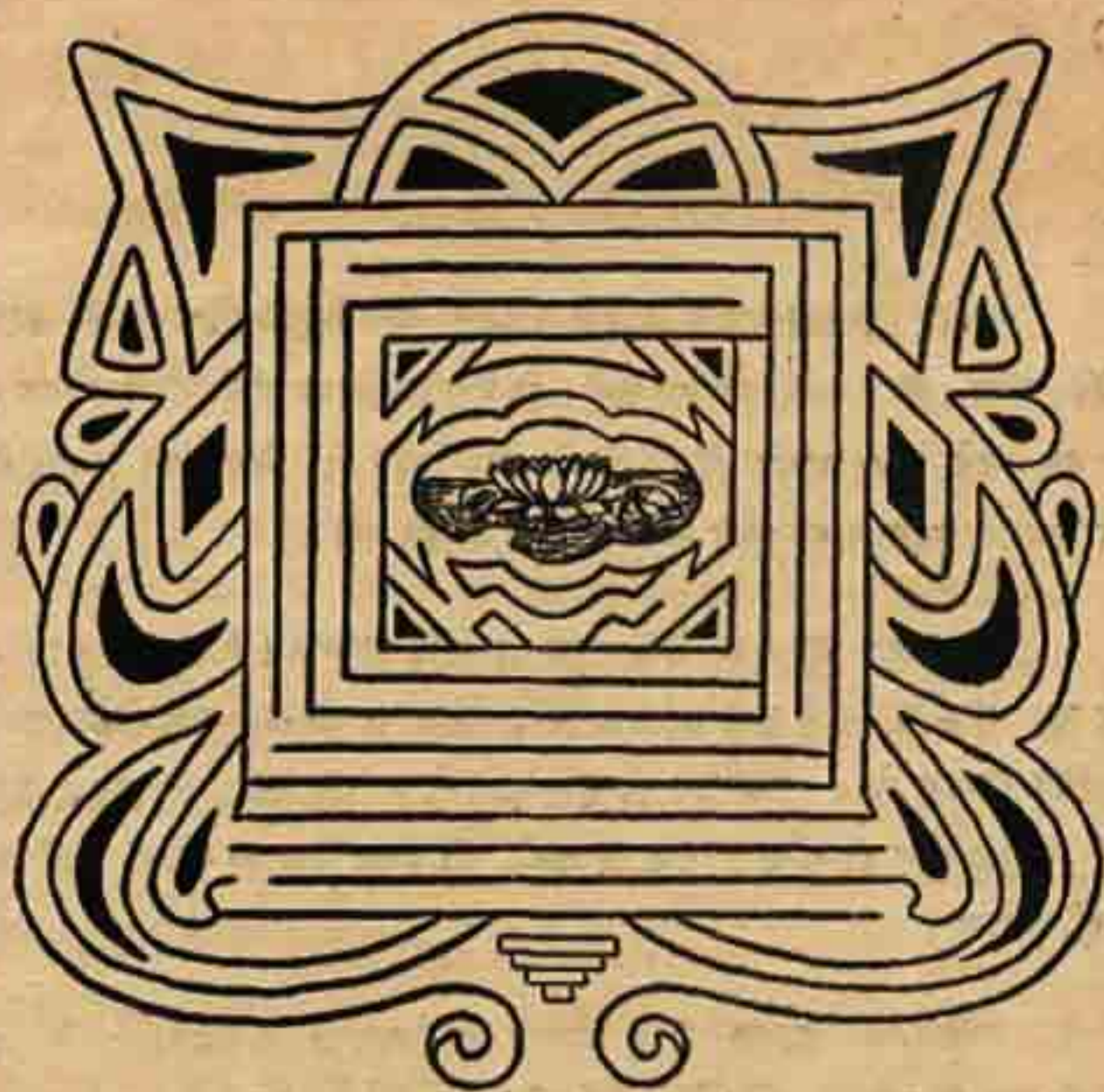
प्यारे बच्चो !

देखो, ऊपर के चित्र के बीचों-बीच एक सरोवर है और उस में एक कमल खिला हुआ है। उस कमल तक पहुँचने के लिए एक ही राह है। तुम पहली बार ही में उस कमल तक पहुँचने की कोशिश करो तो ? देखें, क्या होता है ?

बच्चो ! पिछली बार मैं ने तुम्हें दिवाली के लिए आतिशबाजियाँ बनाने की तरकीबें बताई थीं। लो, इस बार तुम्हें दो ऐसे तमाशे बताता हूँ जो तुम साल भर में जब मन चाहे, कर सकते हो। इनको देख कर हर किसी को अचरज होगा। इनके लिए भी बहुत से रुपए-पैसे खर्च करने की जरूरत नहीं।

एक सफेद कागज ले लो। एक दो नींबू लकर रस निकाल लो। फिर एक कलम उस नींबू के रस में डुबो कर उस कोरे कागज पर जो मन चाहे लिख डालो या कोई चित्र ही बना लो। फिर उस को सूख जाने दो। तब देखो तो कागज पहले की तरह बिल्कुल कोरा ही रहेगा। उस पर तुमने जो लिख दिया था उसका कहीं निशान भी नहीं मिलेगा।

लेकिन वही कागज किसी जलती हुई लालटेन के नजदीक ले जा कर देखो तो क्या होता है ! ज्यों-ज्यों आँच लगेगी कागज का रंग भूरा होता जाएगा और उस पर तुम्हारे लिखे हुए सफेद अक्षर साफ-साफ दीखने लगेंगे। क्या तमाशा है !

नहीं तो, कपड़ा धोने वाले साबुन का एक टुकड़ा ले लो और उस से कागज पर दाब कर लिखो। वैसे तो कुछ भी देखने में न आएगा। लेकिन वही कागज पानी में भिगो कर देखोगे तो लिखावट पढ़ने में आएगी।

सरला देवी
रामप्यारी
कुमारी-सीता

एक बाजीगर

बच्चो ! लो, हम तुम्हें एक खुश-खबरी सुनाते हैं। क्या तुम ने कभी पी. सी. सरकार का नाम सुना है ? ये एक बड़े भारी बाजीगर हैं।

संसार के मशहूर बाजीगरों में सरकार का नाम सब से ऊँचा है। इन्होंने सारे संसार में भ्रमण करके अपनी बाजीगरी से करोड़ों आदमियों का मनोरंजन किया है।

मेस्मरिज़्म, हिप्नोटिज़्म, जादू, बाजीगरी और हाथ की सफाई, इन सब के बारे में आप ने बहुत-सी किताबें लिखी हैं। संसार भर की बाजीगरी-सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओं में इन के लेख प्रकाशित होते हैं।
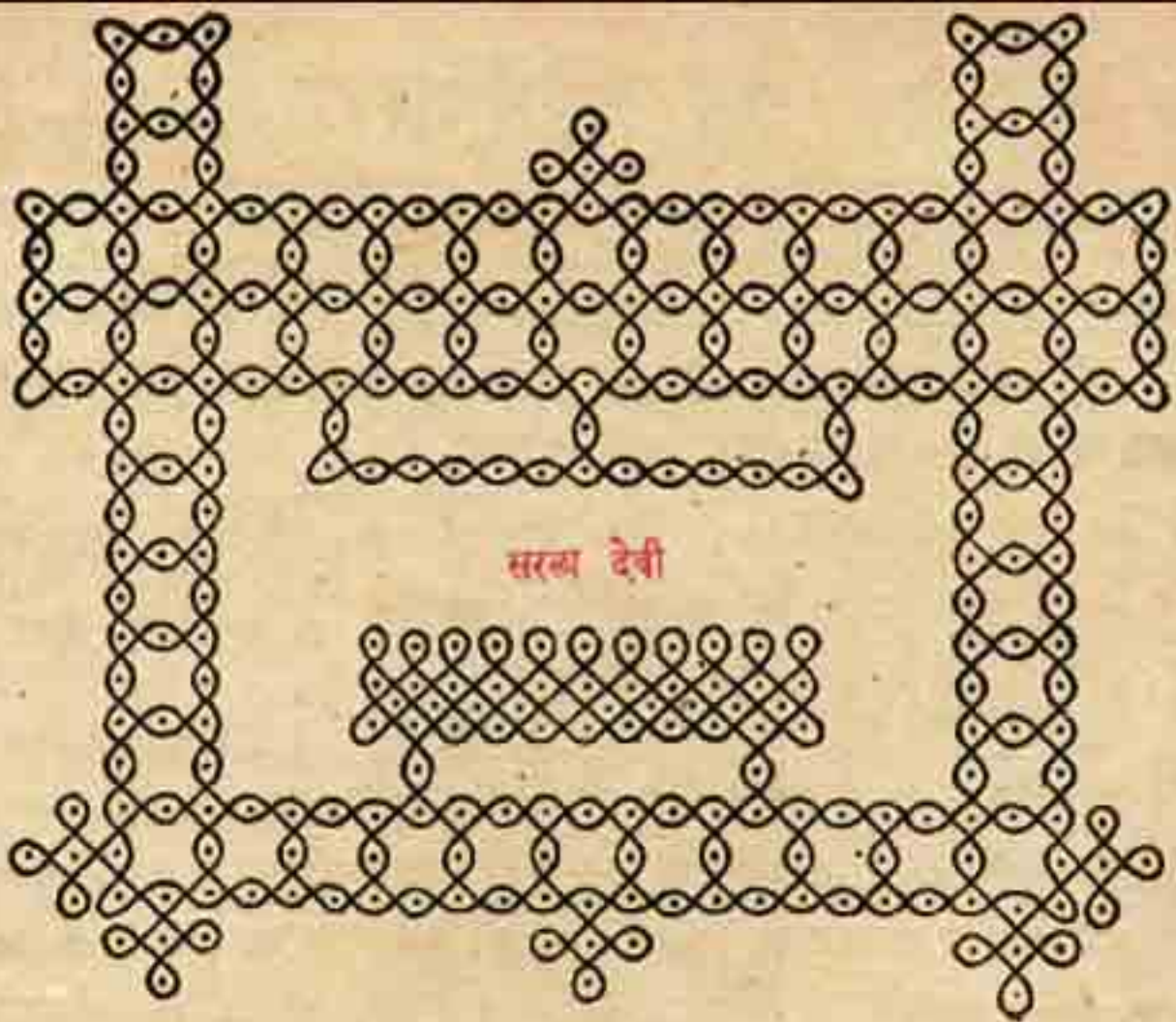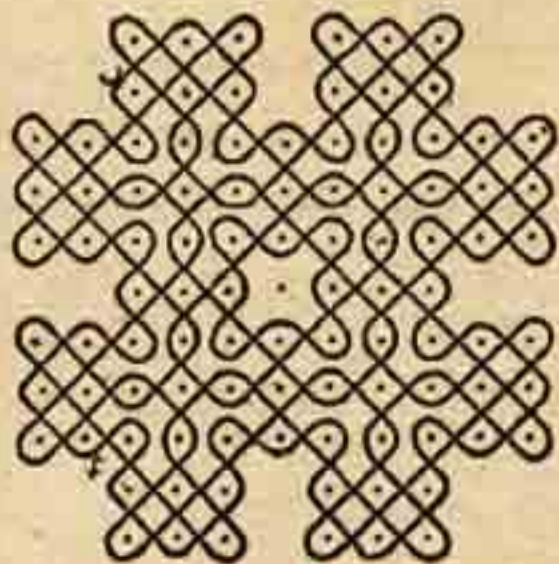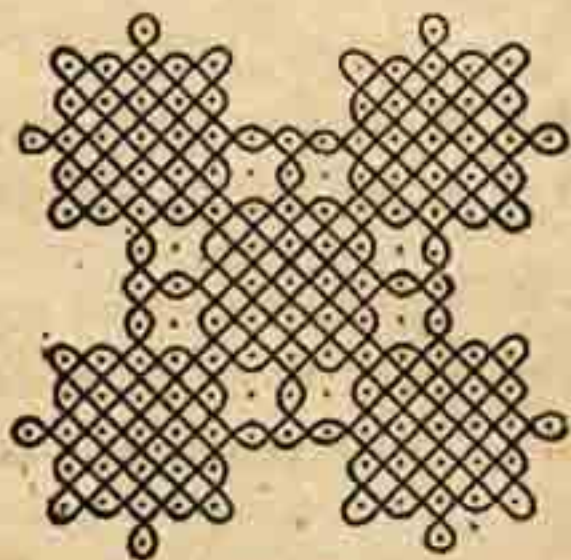
सरकार के लेखों का फ्रांसीसी, अंग्रेजी, स्पेनिश आदि भाषाओं में भी अनुवाद हुआ है। अमेरिका की पत्र-पत्रिकाएँ इन के लेख बड़े सम्मान के साथ प्रकाशित करती हैं। इनके फोटो बड़े-बड़े पत्रों के मुख-पृष्ठों पर छपते हैं।

न्यूयार्क से निकलने वाले 'स्फिंक्स' नामक एक पत्र की तरफ से हर साल संसार के सर्वश्रेष्ठ बाजीगर को स्फिंक्स-पुरस्कार दिया जाता है। यह पुरस्कार श्री सरकार को अब तक दो बार मिल चुका है।

हाँ, बच्चो ! खुश-खबरी यही है कि हम तुम्हारे लिए अगले अङ्क से चन्दामामा में इनकी बाजीगरी के सचित्र लेख छापा करेंगे। सरकार ने तुम्हारा मन बहलाने के लिए यह कष्ट उठाने की कृपा की है। आशा है, तुम इस से जरूर लाभ उठा सकोगे। अगर तुम एक-आध जादूगरी के काम सीख जाओ तो कभी-कभी अपना और अपने मित्रों का मन बहला सकोगे।

संकेत

बाएँ से दाएँ

१. पुरस्कार

३. छिपाव

५. मुलायम

७. पानी।

९. रुपये-पैसे

१०. शाखा

११. कठिन

१२. बाल बनानेवाला

१४. गदगी

१६. पानी भरने का बर्तन

१८. नाक का निचला भाग

१९. बराबर

ऊपर से नीचे

१. चिकित्सा

२. एक तोल

३. पूँछ

४. देश

६. इस पर देवी-देवताओं का जुलूस निकलता है।

८. युद्ध

९. गिरने से यह शब्द होता है।

१२. अबोध

१३. उपवन

१५. धुन

१६. गीत

१७. निचोड़

१ इ	२		■	३		४ व
	■	५	६		■	
७	८	■		■	९	
■	१०		■	११		■
१२		■	१३	■	१४	१५
	■	१६		१७	■	
१८ न			■	१९		न

चूहों के लिए घर !
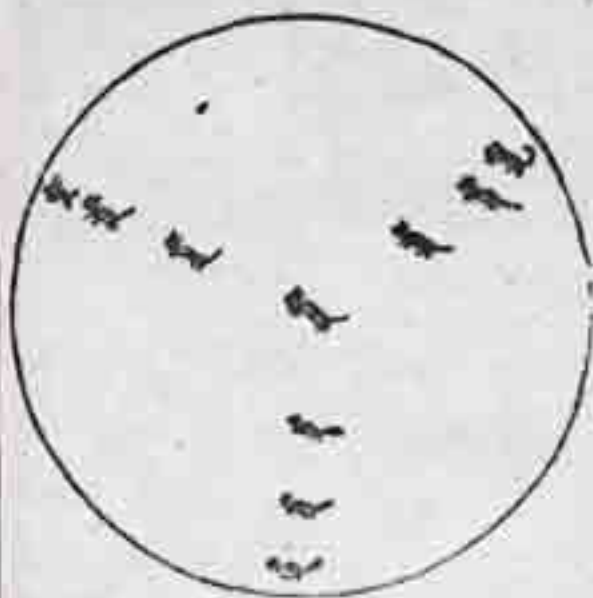
इस वृत्त में दस चूहे हैं। इसी वृत्त में और तीन छोटे वृत्त खींच कर एक एक चूहे के लिए एक एक अलग घर बनाना है। क्या तुम यह काम कर सकते हो? नहीं तो, ५५-वाँ पृष्ठ देखो।

पहेली का उत्तर

[1] इ	[2] ना	म		[3] गु	रा	[4] व
ला		[5] न	[6] र	म		त
[7] ज	[8] ल		थ		[9] थ	न
	[10] डा	ल		[11] क	डा	
[12] ना	ई		[13] था		[14] म	[15] ल
दा		[16] गा	ग	[17] र		ग
[18] न	थु	ना		[19] स	मा	न

हथिनी का बच्चा मुंह से दूध पीता है; सूंड से नहीं।

चीता सब से तेज़ दौड़ता है। फी घंटे ८० मील तक की रफ्तार से जाता है।
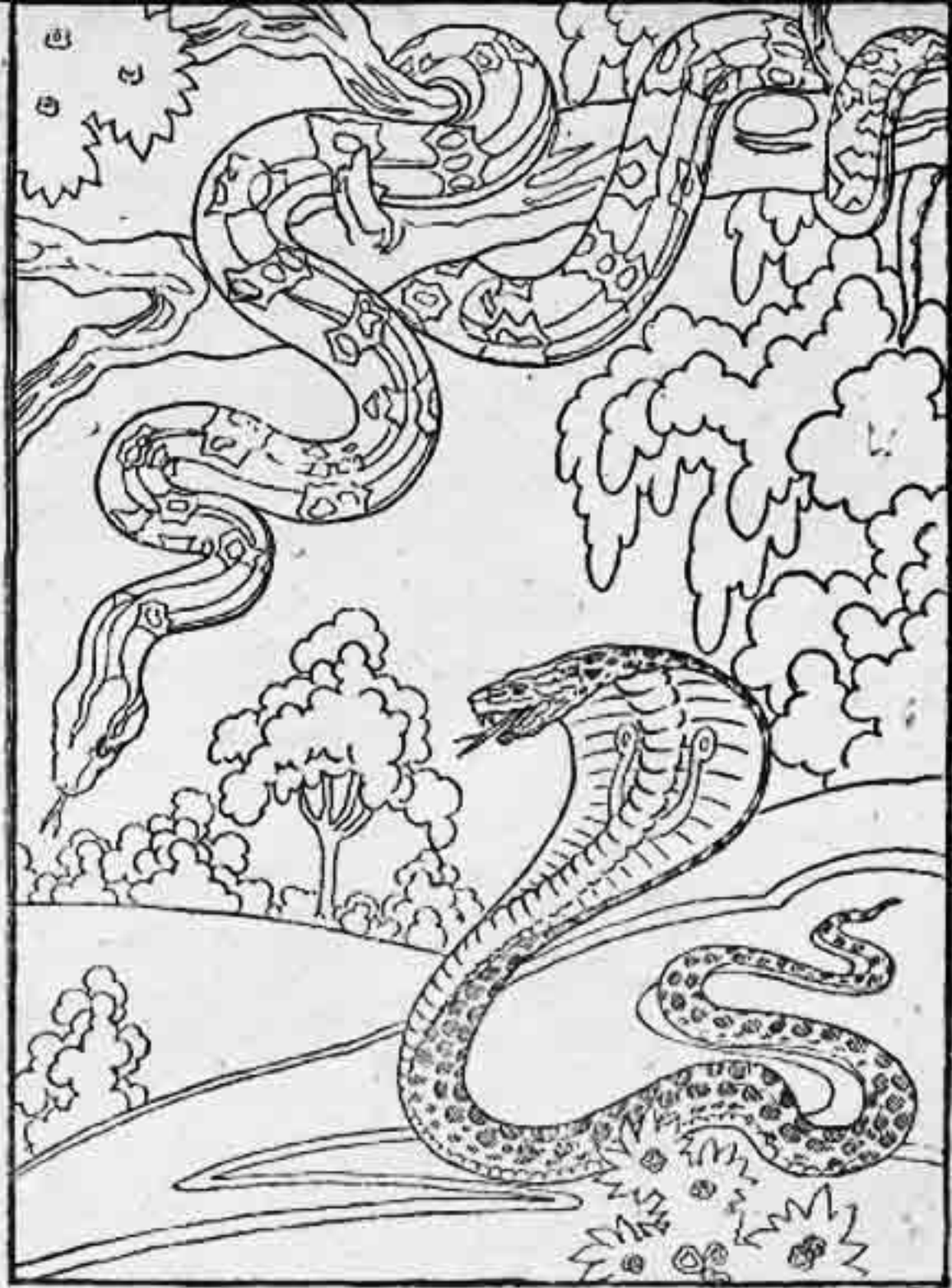
पिछली बार तुम ने बगुले को रंग लिया होगा। इस बार सोचो कि अजगरों को किन रंगों से रङ्गना चाहिए। इस तस्वीर को रङ्ग कर अपने पास रख लेना और अगले महीने के चन्दामामा के पिछले कवर पर के चित्र से उस का मिलान कर के देख लेना।

बच्चो! पिछले अङ्क में तुम ने छाया-चित्र बनाने की तरकीब सीख ली थी ।
लो, इस अङ्क में और तीन चित्र देख लो ।

भालू कुत्ता गाय

चूहों के घर

★

८–वें पृष्ठ की नावों वाली पहेली का जवाब :

पाँचवीं और पहली नावें फ़र्क वाली हैं ।

Controlling Editor: SRI CHAKRAPANI
Printed and Published by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press, Madras-1

Photo British Information Service

दो बहिनें

बगुला ध्यान लगाए बैठा !